मुरली में आनेवाली कहावतें और कहानियाँ

मुरली में आने वाली कहावतें और कहानियाँ

– कृति –

अन्वेषण एवं संकलन

स्पार्क (SpARC)

प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय

पाण्डव भवन, आबू पर्वत (राजस्थान) ।

द्वितीय संस्करण :
अगस्त, 2006

प्रतियाँ : 5000

मुद्रक:
ओमशान्ति प्रिंटिंग प्रेस,
शान्तिवन, आबू रोड – 307 510
☎ – 228125, 228126

पुस्तक मिलने का पता:
साहित्य विभाग,
पाण्डव भवन, आबू पर्वत – 307 501

कापी राइट:
प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय,
पाण्डव भवन, आबू पर्वत – 307 501
राजस्थान, भारत ।

केवल ब्रह्माकुमार भाई-
ब्रह्माकुमारी बहनों की
स्व-उन्नति हेतु

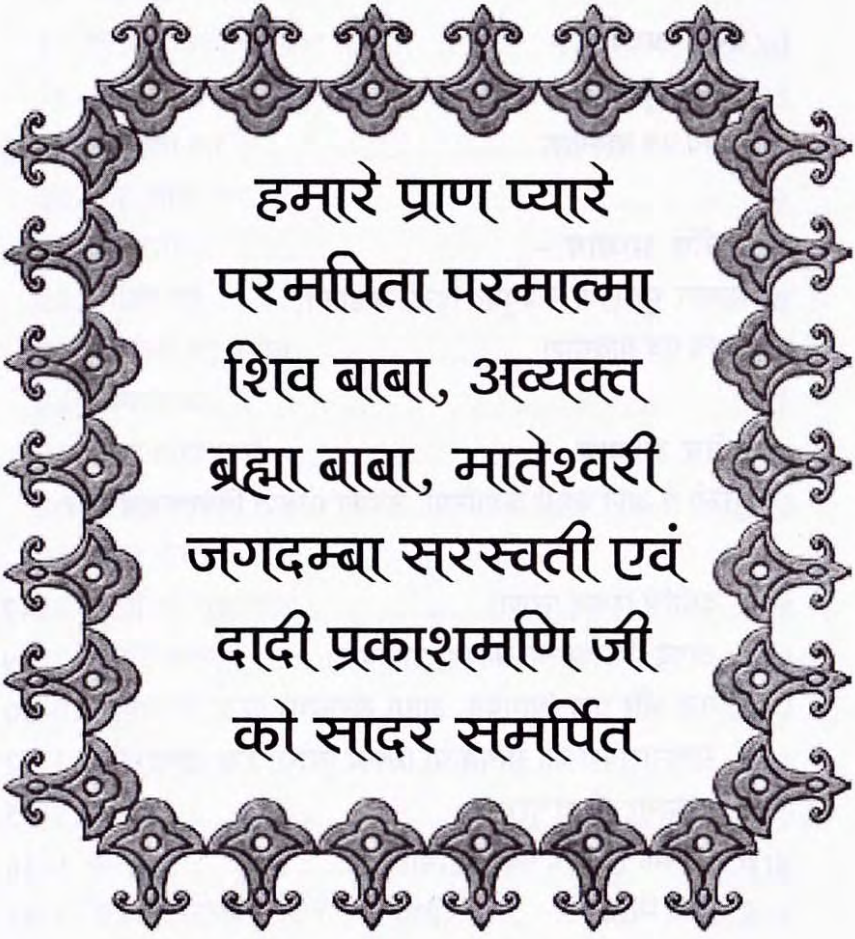

हमारे प्राण प्यारे
परमपिता परमात्मा
शिव बाबा, अव्यक्त
ब्रह्मा बाबा, मातेश्वरी
जगदम्बा सरस्वती एवं
दादी प्रकाशमणि जी
को सादर समर्पित

विषय – सूची

1. दो शब्द 7
2. स्पार्क का संक्षिप्त परिचय 8

3. **प्रथम अध्याय –**
साकार मुरलियों में प्रयुक्त अंग्रेज़ी कहावतें,
वाक्य एवं वाक्यांश 13

द्वितीय अध्याय –
साकार मुरलियों में प्रयुक्त हिन्दी कहावतें,
वाक्य एवं वाक्यांश 21

तृतीय अध्याय –
मुरली में आने वाली कहानियाँ, उनका संक्षिप्त विवरण एवं भाव

1. दधीचि (स्कंद पुराण) 47
2. अंगद (किष्किन्धा काण्ड, रामायण) 49
3. गज और ग्राह (भागवत्, अष्टम् स्कन्धम्) 50
4. सत्यनारायण की सत्यकथा (स्कंध पुराण, रेवा खण्ड) 52
5. भस्मासुर (शिव पुराण) 55
6. कीचक (अरण्य पर्व, महाभारत) 56
7. किंग मिडास 57
8. सुदामा (भागवत्) 59
9. अंधे और हाथी 61
10. अजामिल (कार्तिक पुराण) 63
11. नारद (शिव पुराण) 65
12. जिन्न की कहानी 67

13. अल्लाह अवलदीन और जादू का चिराग
(सहस्र रजनी चरित्र) 70
14. पण्डित की कहानी 73
15. मोहजीत राजा की कथा 75
16. अष्टावक्र (आदि ग्रंथ) 77
17. गुलबकावली (जानपद कथा) 80
18. भगीरथ (ब्रह्माण्ड पुराण) 83
19. रानी का हार 85
20. शेर आया शेर 87
21. तोताराम 89
22. हातिमताई 90
23. संकल्पों का प्रभाव 95
24. अमरकथा 97
25. राजा हरिशचन्द्र 100
26. रूप बसन्त 102
27. खुदा दोस्त 106
28. कर्मों की गुह्य गति 108
29. सागर मन्थन 110
30. तीज़री की कथा 112
31. अहिल्या 114
32. ऊद्धव 116
33. कामधेनु 118
34. सावित्री सत्यवान (देवी भागवतम्) 119
35. सन्त सूरदास 120
36. दिलवाड़ा मन्दिर 122
37. अचलगढ़ 123
38. गौमुख 124
39. अधर देवी 125

40. सोमनाथ मंदिर 126
41. दक्ष प्रजापति 127
42. द्रौपदी 128
43. विराटरूप 129
44. भीष्म पितामह 130
45. पाम्पिया का खेल 131
46. गणेश और कार्तिक 132
47. हिरण्यकश्यप और प्रह्लाद 133
48. कंस और पूतना 136
49. कुम्भकरण 138
50. मीरा 139
51. रुद्र ज्ञान यज्ञ 141
52. सुखदेव और राजा जनक 142
53. शिव पार्वती का विवाह 146

दो शब्द

सम्पूर्ण सृष्टि चक्र में, निराकार परमपिता परमात्मा शिव तथा आदि पिता प्रजापिता ब्रह्मा की मत मशहूर है। परमात्मा पिता की मत ही श्रीमत कहलाती है। वे मानव मात्र को सतोप्रधान बनाने के लिए साकार प्रजापिता ब्रह्मा के तन का आधार लेकर सृष्टि के आदि-मध्य-अन्त का ज्ञान देते हैं और उनका साकार माध्यम होने के कारण पिताश्री ब्रह्मा भी अपने अनुभवों द्वारा बच्चों की स्थिति को मजबूत बनाते हैं। रचता और रचना के गूढ़ ज्ञान को सरल और ग्राह्य बनाने में प्रचलित शिक्षाप्रद कहानियों, कथाओं, आख्यानों तथा पौराणिक उदाहरणों का अपना ही महत्त्व है। इसी उद्देश्य से ईश्वरीय महावाक्यों (मुरलियों) में इन कहानियों के सार-संक्षेप का उल्लेख हुआ है।

सार में वर्णित कहानी को अच्छी तरह से हर ब्राह्मण भाई-बहन समझ सके, उसे उल्लिखित करने के उद्देश्य को हृदयंगम कर सके, इस लक्ष्य को लेकर मुरलियों में वर्णित कहावतों, कहानियों, कथाओं के आध्यात्मिक अर्थ का परिचय देकर उन्हें विस्तार से प्रस्तुत पुस्तक में संग्रहित किया गया है। स्पार्क के भाई-बहनों ने अथक प्रयास से इन कहावतों, कथाओं, कहानियों, आख्यानों को, मूलग्रथों में विस्तार सहित खोजने का प्रशंसनीय कार्य किया है। इसके लिए वे धन्यवाद के पात्र हैं। मुझे आशा है कि इन कहानियों को पढ़कर जिस विशेष धारणा को मजबूत बनाने के लिए बाबा द्वारा इनका इशारा दिया गया है उसे पाठक समझ सकेंगे और उनके अनुसार अपने मन-वचन-कर्म तथा स्वभाव-संस्कार में दिव्य परिवर्तन ला सकेंगे। कहावतों तथा कहानियों का यह संग्रह आपके संगमयुगी ईश्वरीय पुरुषार्थ में दिन दूनी, रात चौगुनी वृद्धि करे, इन्हीं शुभकामनाओं के साथ।

ब्रह्माकुमार रमेश

स्पार्क, ज्ञानसरोवर, आबू पर्वत।

स्पार्क का संक्षिप्त परिचय

जहाँ एक ओर विज्ञान प्रकृति के अनेकानेक पहलुओं को अनावृत्त करने में सफल हुआ है, परमाणु शक्ति की उपयोगिता एवं ब्रह्माण्ड के रहस्यों को खोज निकालने में मददगार बना है वहीं दूसरी ओर अध्यात्म सदियों से समाज को, नकारात्मक वृत्तियों से दूर रख स्नेह, शान्ति और समरसता जैसे मूल्यों के सहारे, एकता के सूत्र में बाँधकर रखने में मददगार रहा है। अत: बेहतर विश्व के निर्माण के लिए बहुत लम्बे अर्से से यह आवश्यकता महसूस की जा रही है कि विज्ञान और अध्यात्म एक-दूसरे की विशेषताओं को समझते हुए सम्मिलित रूप से कार्य करें।

अत: प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय ने विश्व नव-निर्माण आध्यात्मिक न्यास (World Renewal Spiritual Trust) तथा राजयोग शिक्षा एवं शोध संस्थान (Rajyoga Education & Research Foundation) को साथ लेकर ज्ञानसरोवर परिसर में सन् 1995 में बेहतर विश्व निर्माण अकादमी (Academy for a Better World) का निर्माण किया और उसके अन्तर्गत 'स्पार्क' नाम से एक अनुसन्धान केन्द्र की भी रचना की। अध्यात्म एवं विज्ञान में समन्वयता लाने के लिए स्पार्क आध्यात्मिकता को विज्ञान का और विज्ञान को आध्यात्मिकता का पुट (Orientation) प्रदान करने में अपनी रचना के समय से ही कटिबद्ध है। अत: विज्ञान की अनेकानेक शाखाओं में अनुसन्धान के कार्य कराने, सत्यता के प्रति अपनी समझ को विशाल बनाने एवं आज मानवता जिन समस्याओं का सामना कर रही है उनका आध्यात्मिक समाधान खोज निकालने जैसे कार्यों में गहन रुचि रखने वाले ब्र.कु. भाई-बहनों को स्पार्क सहृदय आमंत्रित करता है।

स्पार्क की गतिविधियों को और अधिक गतिशील बनाने के लिए देश-विदेश में स्पार्क के लोकल चैप्टर्स चल रहे हैं। एक अथवा एक से अधिक सेवाकेन्द्र, शहर, राज्य अथवा देश के 5 से अधिक ब्रह्माकुमार भाई-ब्रह्माकुमारी बहनों का समूह जब मिलकर स्पार्क की गतिविधि को कार्यान्वित करता है, उसे स्पार्क लोकल चेप्टर (Local Chapter) कहा जाता है।

वर्तमान में अनुसन्धान के कार्यों के लिए स्पार्क द्वारा निम्नलिखित क्षेत्र निर्धारित किए गए हैं –

1) राजयोग प्रयोगशाला (Rajyoga Lab.)

2) प्राकृतिक विज्ञान (Natural Sciences)

3) चिकित्सा एवं मनोविज्ञान (Medicine, Psychiatry & Psychology)

4) 'घोर विपत्तियों एवं संकटों का व्यवस्थापन' (Disaster Management)

5) विश्व का इतिहास एवं भूगोल (History & Geography of the World)

6) मूल्य-निष्ठ शिक्षा (Value-based Education)

8) व्यापार में सर्वांगीण मूल्य (Holistic Values in Business)

अनुसन्धान के लिए निर्धारित किए गए उपर्युक्त भिन्न-भिन्न क्षेत्रों के लिए 'Special Interest Group (SIG)' यानि 'विशेष रुचि समूह (सिग)' बनाए गए हैं।

स्पार्क द्वारा निर्धारित किए गए विभिन्न अनुसन्धान क्षेत्रों में किस तरह से अनुसन्धान का कार्य किया जाता है इसकी तथा स्पार्क से सम्बन्धित अन्य किसी भी प्रकार की अधिक जानकारी प्राप्त करने के लिए ज्ञानसरोवर स्थित स्पार्क कार्यालय से सम्पर्क करें।

प्रथम अध्याय

साकार मुरलियों में प्रयुक्त अंग्रेज़ी कहावतें, वाक्य एवं वाक्यांश

प्रथम अध्याय

साकार मुरलियों में प्रयुक्त अंग्रेज़ी कहावतें, वाक्य एवं वाक्यांश

1. **Beggar to prince**

विकारों के कारण भिखारी बनी हुई आत्माओं को ज्ञान व योग द्वारा शिवबाबा राजकुमार अर्थात् धनवान, राज्य-अधिकारी बनाते हैं।

2. **Brahma Kumaris richest in the world**

इस ईश्वरीय विश्व विद्यालय को शुरू में बहुत कठिनाइयों का सामना करना पड़ा लेकिन जैसे-जैसे इसकी वृद्धि होती गई यह हर प्रकार से सम्पन्न हुआ है। यह इस बात का प्रमाण है कि ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय परमपिता परमात्मा द्वारा स्थापित किया गया है और आगे चलकर यह सम्पूर्ण रीति से परिपूर्ण कहलाएगा जिसमें आर्थिक सम्पन्नता भी आ जाती है।

3. **Charity begins at home**

दान घर से आरम्भ करना चाहिए – शिव बाबा ब्राह्मण बच्चों को ज्ञान-योग के साथ-साथ दान अर्थात् सेवा की जिम्मेवारी देते हैं। कहा जाता है – पहले घर का कल्याण कर फिर गांव का कल्याण करना चाहिए। ऐसे ही विश्व की आत्माओं को संदेश देने से पहले परिवार व पड़ोसियों का उद्धार करना है।

4. **Creator is the One**

विश्व का रचयिता एक ही है परमपिता परमात्मा शिवबाबा।

5. **Deity sovereignty is your God Fatherly birthright**
दैवी स्वराज्य आपका ईश्वरीय जन्मसिद्ध अधिकार है।

6. **Each one teach one**
हर एक, एक को सिखाएँ।

7. **Garden of Allah and forest of shaitan**
सतयुग अल्लाह अर्थात् शिवबाबा का बनाया हुआ बगीचा है और उसकी भेंट में कलियुग शैतान (माया) का जंगल है।

8. **God Father is creator**
परमपिता शिवबाबा सारी मनुष्य सृष्टि का रचयिता है।

9. **Golden spoon in the mouth**
जब किसी का जन्म सम्पन्न परिवार में होता है तब गोल्डन स्पून इन दी माउथ कहा जाता है। ब्राह्मण बच्चों को 21 जन्मों तक सम्पन्नता की प्राप्ति होती है जिसके लिए बाबा इस मुहावरे का इस्तेमाल अक्सर करते हैं।

10. **God Fatherly children**
ईश्वरीय सन्तान

11. **God is truth**
ईश्वर सत्य है।

12. Godly student life is the best
ईश्वरीय विद्यार्थी जीवन सबसे श्रेष्ठ जीवन है।

13. Hear no evil, See no evil, Talk no evil, Think no evil
बुरा मत सुनो, बुरा मत देखो, बुरा मत बोलो, बुरा मत सोचो।

14. I am your most obedient servant
शिव बाबा कहते हैं - "मैं आपका सबसे अज्ञाकारी सेवाधारी हूँ।"

15. I am a soul, not a body
मैं आत्मा हूँ, शरीर नहीं।

16. Knowledge is the source of income
शिवबाबा द्वारा दिये गये ज्ञान के आधार से ही पुण्य कर्म का खाता और स्वर्गिक राज्य भाग्य रूपी कमाई प्राप्त होती है। यह हमारी ईश्वरीय, बेहद कमाई का स्रोत है।

17. None but One
ब्राह्मण बच्चों के दिल में सिर्फ एक शिवबाबा की ही याद स्थिर रहे, किसी अन्य देहधारी की नहीं।

18. On God Fatherly service
ईश्वरीय सेवा में।

19. Religion is might
धर्म एक शक्ति है।

20. Rise of Bharat and Downfall of Bharat
भारत का उत्थान और भारत का पतन।

21. Son shows father, father shows son
बच्चों से बाप की प्रत्यक्षता होती है। इस समय बाप ने बच्चों को विश्व के सन्मुख प्रत्यक्ष किया है और स्वयं गुप्त रहकर सेवा कर रहे हैं।

22. Sweetest-luckiest children in the world
विश्व में अति मीठे, पद्मापद्म भाग्यशाली बच्चे।

23. Spiritual University of Spiritual incorporeal God Father
रूहानी निराकार शिवबाबा का आध्यात्मिक विश्व विद्यालय।

24. Silence is golden
मौन सोने जैसा है।

25. Unknown but very well known warriors
हम अज्ञात परन्तु बहुत प्रख्यात योद्धे हैं – ब्राह्मण के रूप में हम इस समय अज्ञात हैं लेकिन शास्त्रों में हम भिन्न-भिन्न नामों से बहुत प्रख्यात हैं।

द्वितीय अध्याय

साकार मुरलियों में प्रयुक्त हिन्दी कहावतें, वाक्य एवं वाक्यांश

द्वितीय अध्याय

साकार मुरलियों में प्रयुक्त हिन्दी कहावतें, वाक्य एवं वाक्यांश

1. **अन्त मति सो गति / अन्त मते सो गते**
जैसी तुम्हारी अन्तिम विचारधारा होगी, वैसी गति अर्थात् वैसा ही जन्म मिलेगा।

2. **अन्तकाल जो स्त्री सिमरे, ऐसी चिंता में जो मरे,**
वल-वल वेश्या योनि को अवतरे।
अन्तकाल जो नारायण सिमरे, ऐसी चिंता में जो मरे,
वो पिताम्बर (नारायण) को पाये। (गुरुग्रंथ साहब)
जो अन्तिम समय स्त्री को याद करेगा वो वेश्या योनि में प्रवेश करेगा और जो अन्त समय पर नारायण को याद करेगा वो नारायण पद को प्राप्त करेगा। अन्तिम समय पर जो जिस तरह की याद में शरीर छोड़ता है उस तरह का जन्म उसे मिलता है। अत: सिर्फ एक शिव बाबा की ही याद हो। अन्त समय में नारायण को भी याद नहीं करना है क्योंकि वह भी देहधारी है। अन्त समय में सिर्फ शिव बाबा की याद चित्त में स्थिर रखने के लिए बहुतकाल का पुरुषार्थ चाहिए।

3. **अन्धे की औलाद अंन्धे और सज्जे की औलाद सज्जे।**
माया रूपी रावण के बच्चे रावणी (आसुरी) बुद्धि वाले होंगे अर्थात् ज्ञान नयनहीन होंगे और ईश्वर की सन्तान ईश्वरीय बुद्धि वाले होंगे अर्थात् ज्ञान नेत्रवान होंगे।

4. **अच्युतम् केशवम् रामनारायणम्**
कृष्ण दामोदरम् वासुदेवम् हरि,
श्रीधरम् माधवम् गोपिका वल्लभम्
जानकी नायकम् रामचन्द्रम् भजे।
इस पद्य में कृष्ण की महिमा दी गई है लेकिन महिमा तो सिर्फ एक शिव बाबा की होनी चाहिए क्योंकि शिव बाबा ही सबसे श्रेष्ठ हैं।

5. **अपनी घोट तो नशा चढ़े।**
अपनी विशेषताओं को जितना याद करते रहेंगे उतना नशा चढ़ेगा। अपनी बुद्धि से मनन-चिन्तन जितना करते रहेंगे उतना नशा चढ़ेगा।

6. **असंख मूरख अंध घोर**
असंख चोर हराम खोर
असंख अमर कार जाहि जोर....(जप साहब, गुरुग्रंथ)
अन्धकार में ठोकर खाते हुए मूर्ख और अन्धे अनगिनत हैं। दूसरों की कमाई को लूटने वाले चोर और डाकू अनगिनत हैं। ऐसी विकारी दुनिया में निराकार शिव बाबा अवतरित होकर कलह, क्लेश, रोग, दु:ख सब नाश करके ऐसा दैवी स्वराज्य स्थापन करते हैं जहाँ संतोष, स्वास्थ्य, सम्पन्नता और सम्पूर्णता है।

7. **अम्मा मरे तो भी हलुआ खाना, बीबी मरे तो भी हलुआ खाना।**
ज्ञान न होने के कारण मनुष्य मृत्यु आदि कई कारणों से रोते है, दु:खी होते हैं। ब्राह्मण बच्चों के लिए तो एक शिव बाबा दूसरा न कोई। किसी भी परिस्थिति में अफसोस करने की बजाए ज्ञान का हलुआ खाना अर्थात् मुरली सुनना नहीं छोड़ना। नष्टोमोहा बनना है।

8. **अल्लिफ को अल्लाह मिला, बे को मिली झूठी बादशाही। आई तार अल्लिफ को, हुआ रेल का राही।**

वाराणसी में जब दादा को भविष्य में होने वाले महाविनाश का साक्षात्कार हुआ तब उनका दुनियावी वैभवों और अपने व्यवसाय से मन उठ गया। दादा ने अपने भागीदार से छुट्टी माँगी और जो भी वह ठीक समझे, वैसा ही हिसाब करने के लिए कहा। उस समय दादा जी ने अपने घर में एक तार दिया जिसमें उपरोक्त पंक्तियाँ लिखी थीं। यहाँ अल्लिफ का अर्थ पहला व्यक्ति अर्थात् दादा है और बे उनके भागीदार का वाचक है। दादा को परमात्मा मिला, भागीदार को पैसा मिला। दादा को चिठ्ठी आयी और वे रेल में अपने लौकिक काका की अन्तिम क्रिया के लिए रवाना हुए।

9. **आत्मा परमात्मा अलग रहे बहुकाल, सुन्दर मेला कर दिया जब सत्गुरु मिला दलाल।**

आत्मा और परमात्मा बहुत काल से (सतयुग से कलियुग अन्त तक) अलग रहे। अब सत्गुरु परमात्मा शिव धरती पर आकर आत्माओं से मिलन मनाते हैं। आत्मा परमात्मा से अलग हुए 5000 वर्ष हुए। अब आत्मा का परमात्मा के साथ इस संगमयुग पर जो सुन्दर मिलन मेला होता है, वह ब्रह्माबाबा दलाल के माध्यम से होता है।

10. **आत्मा सो परमात्मा, परमात्मा सो आत्मा। हम सो, सो हम।**

भक्ति मार्ग की मान्यता के अनुसार आत्मा ही परमात्मा है और परमात्मा ही आत्मा है लेकिन यह कहना असत्य है। आत्मा और परमात्मा अलग-अलग हैं। शिव बाबा, जो निराकार एवं परमधाम

निवासी हैं वह तो सर्व आत्माओं के पिता हैं न कि आत्मा।

11. आप मुये मर गयी दुनिया।

अगर आप मर जाओ तो दुनिया भी आपके लिए जैसे कि खत्म हो गयी। जब मन से पुरानी दुनिया और दुनियावी वैभवों का त्याग करते हैं अर्थात् जब दुनिया से मरते हैं तब हमारे लिए जैसे कि दुनिया भी खत्म हो जाती है। किसी का मरना माना दुनियावी बातों से, सुख-दु:ख से, अतीत होना। ऐसे ही ब्राह्मण बच्चे भी सुख-दु:ख, निन्दा-स्तुति, हानि-लाभ में एकरस रहते हैं। प्रभावित न होकर उससे अतीत या पार हो जाते हैं।

12. आश्चर्यवत् बाप का बनन्ती, कथन्ती, फिर फारकती देवन्ती।

बच्चे नया ज्ञान, नयी बातें आश्चर्यवत् सुनते हैं, बाप का बनकर ज्ञान सुनते सुनाते हैं और फिर कोई बात में संशय आता है तो बाबा को छोड़कर चले जाते हैं।

13. इच्छा-मात्रम्-अविद्या।

इच्छा के बारे में सम्पूर्ण अज्ञान - इच्छाएं मृगतृष्णा के समान हैं जिनके पीछे भागने से वह और ही दूर चलती चली जाती हैं और हमें असन्तुष्ट करती रहती हैं। इस सम्बन्ध में बाबा हमें बहुत अच्छी युक्ति बताते हैं कि जब हमें इच्छाओं के बारे में कुछ ज्ञान ही नहीं रहता तब मन की ऊंची स्थिति द्वारा हमारी हर मनोकामना स्वत: पूर्ण हो जाती है। यह युक्ति है सदा सन्तुष्ट और तृप्त रहने की।

14. ईश्वर की गत-मत न्यारी है।

परमात्मा जो गति सद्गति की मत देते हैं, वो सबसे न्यारी है।

15. एक ओंकार सत् नाम करता पुरुख
निरभय, निरवैर, अकाल मूरत,
अयोनि सैभं प्रसादि जप (जप साहब, गुरुग्रन्थ)

भगवान एक है, जिनका नाम सत्य है, जो करन-करावनहार हैं, मूल पुरुष हैं। उनको किसी से भय नहीं, किसी से वैर नहीं है, जो कालातीत हैं, जन्म-मरण रहित हैं। शिव बाबा परम-शिक्षक बन अपने बच्चों को ईश्वरीय ज्ञान देते हैं। यही उनकी कृपा है। उन्हें याद करना ही प्रसाद है।

16. एक बल एक भरोसा।

एक परमात्मा पिता में निश्चय तथा उनकी शक्ति पर विश्वास हर कार्य में सफलता प्राप्त कराता है।

17. एक बाप दूसरा न कोई।

लौकिक व्यवहार में रहते हुए, लौकिक से तोड़ निभाते हुए मन में सिर्फ एक शिव बाबा को ही याद करना है और उनसे ही सर्व सम्बन्धों का रस लेना है। बुद्धि में एक के सिवाए दूसरा कोई याद न आये।

18. एक हाथ से ताली नहीं बजती।

एक व्यक्ति अकेला झगड़ा नहीं कर सकता। हमेशा गलती दो तरफ से होती है। जैसे दो हाथ के बिना ताली बजाना असम्भव है, ऐसे झगड़ा भी दो के संस्कारों के टक्कर से शुरू होता है।

19. कख का चोर सो लख का चोर।

एक पैसे की चोरी भी लाख रुपयों की चोरी के बराबर है। जिसे छोटी चीज़ चोरी करने की आदत है उससे बड़ी चोरी भी हो सकती है।

20. हथ कार डे, दिल यार डे। (सिंधी)

हाथों से काम करते रहो, दिल से माशूक शिव बाबा को याद करते रहो अर्थात् कर्मयोगी बनो।

21. कम खर्च बाला नशीन।

खर्चा कम हो और कार्य अच्छा हो - ईश्वरीय सेवा का यही लक्ष्य है कि अनेक आत्माओं तक ईश्वरीय संदेश पहुँचे। उसके लिए खर्चा होता है तो हिचकिचाना नहीं है लेकिन इसका मतलब यह भी नहीं कि धन को जैसे चाहें वैसे खर्च करें। यज्ञ का एक-एक पैसा ब्राह्मण बच्चों की भावनापूर्ण देन है। इसलिए उसे सोच-समझकर खर्च करना है। कोई भी कार्य में खर्चा कम और कार्य अच्छे से अच्छा तथा शानदार हो।

22. करन-करावनहार (गुरुग्रंथ साहब)

करने वाले, कराने वाले आपही हो (शिव बाबा)। जो कुछ भी हम कर रहे हैं वह सब आप ही हमसे करा रहे हो। स्वयं को निमित्त समझकर करनकरावनहार शिव बाबा को याद करते हैं तो हर कार्य में विजय अवश्य प्राप्त होती है।

23. कर बुरा तो हो बुरा।

जैसा कर्म वैसा फल। बुरा सोचना, बुरा करना, बुरा बोलना होगा तो

फल भी बुरा ही मिलेगा।

24. कर भला तो हो भला।

अच्छा सोचो, अच्छा करो तो अच्छा फल पाओगे।

25. करो सेवा तो मिले मेवा।

सेवा करो और भाग्य बनाओ। कर्म का सिद्धान्त कहता है कि जैसा कर्म वैसा फल। ईश्वरीय सेवा करने का अनेक गुना भाग्य केवल इस संगमयुग पर ही प्राप्त होता है इसलिए अभी ईश्वरीय सेवा कर सारे कल्प के लिए श्रेष्ठ भाग्य का खाता जमा करना है।

26. कहना बेटी को, सिखाना बहु को
(चओ धीय खे, सिखे नूँअ) (सिंधी)

समझदार सास और ससुर जब बहु को कुछ शिक्षा देना चाहते हैं तो वे उसे सीधा न कहकर उसके सामने अपनी बेटी को वह शिक्षा देते हैं। उनके कथन को सुनकर बहु को शिक्षा तो मिलती ही है लेकिन वह बुरा भी नहीं मानती। ऐसे ही शिव बाबा कहते हैं जो बाबा के पक्के बच्चे हैं उन्हें उनकी भूल बताते हुए सुधरने का मार्ग बताता हूँ ताकि इस आध्यात्मिक पुरुषार्थ में जो अभी नये हैं वे घबराये नहीं और साथ-साथ अपनी गलती को महसूस भी करें।

27. किनकी दबी रही धूल में, किनकी राजा खाए, किनकी चोर लूट ले जाए, किनकी आग जलाये, सफल होय उनकी जो धनी के नाम लगाये।

अन्त समय में स्थूल धन कई तरह से विनष्ट होगा लेकिन जो अपना

धन इस समय परमात्मा के कार्य में खर्च करते हैं उनका धन अनेक जन्मों के लिए सफल होता जाता है।

28. खाऊँ-खाऊँ पेट में बलाऊँ।

कई बार पेट में ऐसे कीड़े हो जाते हैं जिन्हें बलाऊँ कहते हैं, जो अन्दर भोजन को खाते रहते हैं और खाने वाला कितना भी भोजन करता रहे, उसकी इच्छा सदा यही बनी रहती है कि और भी खायें। इस कहावत का भावार्थ यह है कि आसक्ति से पदार्थों की तरफ आकर्षित होने और सदा खाने के बारे में ही सोचने और खाते रहने से कभी भी तृप्ति नहीं होता।

29. खुदाताला अल्लाह साँई।

खुदाताला, अल्लाह, साँई (स्वामी) ये सब परमात्मा के नाम है लेकिन परमात्मा का असली नाम है सदाशिव।

30. गई टाँडे पर (आग लेने) और खुद मालिक बन बैठी।

जैसे कहा जाता है, अपने घर में दिया जलाने के लिए किसी दूसरे घर में आग लेने के लिए गया और वहाँ जाकर खुद ही मालिक हो गया। वैसे ही बाबा कहते हैं, बच्चे, भक्ति मार्ग वालों के पास शिष्य के रूप में जाकर उनसे प्रश्न-उत्तर करो और उन्हें ज्ञान देकर उनका गुरु बन जाओ।

31. गुड़ जाने गुड़ की गोथरी जाने।

शिव बाबा (गुड़ जैसा मीठा बाबा) जाने, और उनकी गोथरी अर्थात् जिनमें वह आते हैं (ब्रह्मा बाबा) वह जाने।

32. घट में ही ब्रह्मा, घट में ही विष्णु, घट में ही नौ लख तारे।
एक सेकण्ड़ में शिव बाबा, ब्रह्मा बाबा के तन में आकर ज्ञान देते और बह्मा सो विष्णु और नौ लाख प्रजा तैयार हो जाती है।

33. चढ़ती कला तेरे भाने सर्व का भला। (गुरुग्रन्थ साहब)
आपकी सद्गति के साथ-साथ सर्व आत्माओं को गति अर्थात् मुक्ति मिल जाती है। तो आपकी चढ़ती कला में सर्व का भला है।

34. चढ़े तो चाखे वैकुण्ठ रस, गिरे तो चकनाचूर।
ज्ञान मार्ग में कदम-कदम पर सम्भाल कर चलना पड़ता है। हर कदम पर राय लेनी पड़ती है। जो ज्ञान-मार्ग की सीढ़ी पर निरन्तर आगे चढ़ते रहते हैं वे वैकुण्ठरस चखने के अधिकारी बनते हैं लेकिन अगर माया के वश होकर नीचे गिर जाते हैं तो अधोगति को प्राप्त करते हैं।

35. चिंता ताकि कीजिए जो अनहोनी होए। (गुरुग्रंथ साहब)
किसी भी बात की चिंता नहीं करनी चाहिए क्योंकि भावी अटल है, जो होना है, वही हो रहा है।

36. चुल पे सो दिल पे।
जो साथ रहते हैं वे दिल पर रहते हैं अथवा भोजनगृह में जो अथक होकर सेवा करते हैं वे दिल पर चढ़ते हैं।

37. चूहे लधी हेड़गरी, आवँ पसारी (सिंधी)
(चूहे को मिली हल्दी की गाँठ, समझा मैं भी पंसारी हूँ।)

कई ऐसे हैं जो थोड़ा-सा ज्ञान समझकर अहंकार में आ जाते हैं और अपने आपको बहुत बड़ा ज्ञानी समझने लगते हैं। सच्चा ज्ञानी निरहंकारी रहेगा।

38. छोटा मुँह बड़ी बात

हैं छोटे परन्तु बातें ऊंची करते हैं। यज्ञ में ज्ञान सुनाने वाले भाई-बहनें ज्यादातर युवा ही हैं। युवकों के मुख से इतना ऊंचा ज्ञान सुनकर बाहर वाले आश्चर्य-चकित हो जाते हैं।

39. जिन सोया तिन खोया।

अमृतवेले जो सोते हैं वे सर्व प्राप्तियों को खो देते हैं।

40. जैसा अन्न वैसा मन

जैसी आहार वैसी विचार। अन्न का प्रभाव मन पर बहुत अधिक पड़ता है इसलिए एक राजयोगी को सिर्फ शुद्ध, शाकाहारी भोजन ही खाना चाहिए जो उसके मन को निर्मल और एकरस बनाए रखता है।

41. जैसा राजा वैसी प्रजा।

यथा राजा तथा प्रजा – सतयुग में राजा-प्रजा सब सुखी और सम्पन्न थे लेकिन आज इस कलियुग में प्रजा ही राजा है और राजा ही प्रजा है और सभी कंगाल, दु:खी बन गये हैं।

42. जैसी करनी वैसी भरनी

जो जैसा कर्म करता है उसे वैसा ही फल भोगना पड़ता है।

43. जैसी मत वैसी गत।

जैसी किसी की विचारधारा होती है प्राप्ति भी वैसी ही होती है।

44. जैसा बाप वैसे बच्चे।

जैसा बाप वैसे बच्चे। जैसे शिव बाबा सर्वश्रेष्ठ और ऊंच ते ऊंच हैं वैसे बच्चों को भी अपने को पुरुषार्थ से ऊंच बनाना है।

45. जो ओटे सो अर्जुन।

जो अपने आप आगे आकर सेवा की जिम्मेवारी उठाता है वही अर्जुन अर्थात् अव्वल नम्बर (नम्बरवन) में आता है।

46. जो करेगा सो पायेगा।

जो पुरुषार्थ करेगा उसे फल की प्राप्ति होगी। जो मेहनत से मुंह मोड़ेगा उसे ऊंच प्राप्ति नहीं होगी।

47. जो कर्म हम करेंगे हमें देख और करेंगे।

''हम जो कर्म करेंगे उसे देख दूसरे भी वैसा ही करेंगे।'' – यह स्लोगन ब्रह्मा बाबा अपने पुरुषार्थ की तीव्रता को बढ़ाने के लिए उपयोग करते थे और इससे आलस्य और सुस्ती से दूर रहते थे क्योंकि उन्होंने सभी के सामने सैम्पल बनने का लक्ष्य रखा था।

48. झूठी माया, झूठी काया, झूठा सब संसार।

धन, शरीर, यह पुरानी दुनिया सब विनाशी हैं। अविनाशी ज्ञान और अविनाशी बाप सत्य है, बाकी सब झूठ है।

49. टट्टू को टारा, काजी को इशारा।

समझदार व्यक्ति केवल इशारे से ही समझ जाता है जबकि मूर्ख चाबुक लगाने से ही समझता है।

50. डूबते को तिनके का सहारा।

डूबते हुए आदमी को तिनके का सहारा मिला - मुसीबत के समय पर थोड़ा-सा सहयोग भी किसी का सहारा बन सकता है।

51. त्वमेव माता च पिता त्वमेव
त्वमेव बन्धु च सखा त्वमेव
त्वमेव विद्या द्रविणम् त्वमेव
त्वमेव सर्वं मम देव देव (गुरुचरित्र)

आप ही हमारे माता, पिता, बन्धु, सखा हो। आप ही विद्या, आप ही धन हो। आप ही हमारे सर्वस्व हो।

52. तुम मात-पिता हम बालक तेरे, तुम्हरी कृपा से सुख घनेरे। (गुरुग्रंथ साहब)

आप ही हमारे मात-पिता हो। हम आपकी सन्तान हैं। आपकी कृपा से हमें अपार सुख प्राप्त होता है। शिव बाबा अपने बच्चों को पढ़ाई पढ़ाते हैं यही उनकी कृपा है। ब्राह्मण बच्चों को ध्यान से पढ़ाई पढ़ना है और अपने आपको सौभाग्यशाली बनाना है।

53. तुरन्त दान महापुण्य।

दान करने का संकल्प आते ही दान कर देना,इसमें महापुण्य का फल समाया है।

54. तुलसीदास चंदन घिसे, तिलक देत रघुवीर...।

मैं आत्मा और मेरा बाप शिव बाबा यही अन्दर में घोटना है (चंदन घिसना है)। इस निरन्तर स्मृति के आधार से ही राजाई का तिलक मिलेगा अर्थात् स्वर्ग के महाराजा, महारानी बनेंगे।

55. दिल साफ़ तो मुराद हासिल।

अगर हमारा दिल साफ़ है तो सर्व मनोकामनायें स्वत: पूर्ण होंगी।

56. दु:ख में सिमरण सब करें, सुख में करे न कोई
जो सुख में सिमरण करे तो दु:ख काहे को होए।

जब दु:ख आता है तब भगवान को सब याद करते हैं। फिर सुख में भूल जाते हैं। अगर सुख में भी निरन्तर भगवान की याद रहे तो दु:ख की बात ही नहीं रहेगी।

57. दे दान तो छूटे ग्रहण।

विकारों का दान देने से आत्मा पर जो तमोप्रधानता का ग्रहण है वो छूट जायेगा।

58. धन दिये धन ना खुटे।

ज्ञान रूपी धन कितना भी दान करने से कभी कम नहीं होता है। ईश्वरीय प्राप्तियों को दान करने से ईश्वरीय नियम प्रमाण, जितना दान करेंगे उतनी वृद्धि होगी अर्थात् देना ही बढ़ाना है।

59. धन्धे सब में धूर, बिगर धन्धे नर से नारायण बनाने के।

सब धन्धों में सिर्फ वही धन्धा श्रेष्ठ है जो नर से नारायण बनाता है।

बाकी किसी धन्धे से कोई अविनाशी प्राप्ति नहीं हो सकती। भक्तिमार्ग में बहुत पूजा आदि करते हैं लेकिन उनको परमात्मा की यथार्थ पहचान नहीं है। अनेक प्रकार के मेले लगते हैं क्योंकि आमदनी तो होती है। यह सब उन्हों का धन्धा है। लेकिन नर से नारायण बनाने वाला धन्धा है - बाप का बनकर सब कुछ देह सहित बाप को दे देना। फिर बाबा हमको सतोप्रधान शरीर देकर सतयुग में भेजते हैं। कोई मुश्किल ही यह धन्धा करते हैं।

60. धरत परिये धर्म न छोड़िये।

किसी भी परिस्थिति में अपने धर्म अर्थात् धारणा से डगमग नहीं होना है। ईश्वरीय नियम स्वउन्नति के लिए ही बनाये गये हैं। उनको अपनाने से स्वयं को ही लाभ होता है। अत: कितनी भी विकट परिस्थिति हो हम अपनी धारणा और नियमों पर अटल रहें।

61. धोबी के घर से गई छू।

यज्ञ में विघ्न तो पड़ेंगे ही, अबलाओं पर अत्याचार होंगे, आसुरी वृत्ति वाले हंगामा करेंगे। यह सब कुछ हो रहा है कल्प पहले मुआफ़िक। अन्दर से समझते हैं कि यह तो भावी है लेकिन बाहर से रिपोर्ट आदि करनी पड़ती है। जानते हैं कल्प पहले जो हुआ था वह होगा, इसमें दु:ख की कोई बात नहीं। नुक्सान हुआ, धोबी के घर से गई छू... फिर दूसरा बन जायेगा।

62. नज़र से निहाल कींदा स्वामी सतगुरु।

बाबा जो हमारा सच्चा सत्गुरु, स्वामी है वह हम बच्चों को नज़र से निहाल कर देते हैं।

63. न बिसरो न याद रहो।

शिव बाबा कहते हैं - बच्चे सदा खुश रहो, बाबा की याद से आबाद रहो। न मैं बच्चों को भूलता हूँ, न नाम-रूप सदा याद रखता हूँ।

64. नर चाहत कुछ और, और की और भई... (गुरुग्रंथ साहब)

मनुष्य कुछ चाहता है और भगवान को कुछ और ही मंजूर होता है।

65. नष्टोमोहः स्मृतिलब्धा त्वत्पंसादान्मयाच्युत।
स्थितोस्मि गतसन्देहः करिष्ये वचनं तव।
(भगवत् गीता, 18-अध्याय, 73 श्लोक)

हे परमात्मा! आपकी कृपा से मेरा मोह नष्ट हो गया है और मैंने स्मृति प्राप्त कर ली है। अब संशय रहित होकर मैं आत्मस्थिति में स्थित हूँ। आपकी आज्ञा का अब मैं पालन करूँगा।

मोह को नष्ट कर निरन्तर ईश्वरीय स्मृति में स्थित रहने से ही आत्मा को सद्गति प्राप्त होती है।

66. निर्भय, निर्वैर, अकालमूर्त...सतगुरु प्रसाद। (गुरुग्रंथ साहब)

भगवान को किसी का भय नहीं, किसी से वैर नहीं और उसको कभी काल खा नहीं सकता।

67. निश्चय बुद्धि विजयन्ति, संशय बुद्धि विनश्यन्ति।

निश्चय बुद्धि वाली आत्मा की विजय निश्चित होती है। जहाँ संशय बुद्धि है वहाँ विनाश अर्थात् हार होती है।

68. पढ़ेंगे-लिखेंगे बनेंगे नवाब, खेलेंगे-कूदेंगे होंगे खराब।
पढ़ाई में लगन होगी तो ऊँच पद पायेंगे, खेल-कूद में समय गँवायेंगे तो पद भ्रष्ट होगा। ईश्वरीय पढ़ाई में ध्यान देकर निरन्तर पुरुषार्थ करते हुए लक्ष्य के समीप जाना है। जो ईश्वरीय पढ़ाई में ध्यान नहीं देंगे तो योग्य पद की प्राप्ति भी नहीं होगी।

69. पारब्रह्म परमेश्वर पाया, सगले दु:ख विसरे। (गुरुग्रंथ साहब)
पार ब्रह्म में रहने वाला परमेश्वर मिला, मेरे सब दु:ख मिट गये।

70. बच्चू बादशाह पीरू वजीर।
काम विकार अगर विकारों का राजा है तो क्रोध उसका वज़ीर है।

71. बनी बनाई बन रही अब कुछ बननी नांहि,
चिंता ताकी कीजिए, जो अनहोनी होए। (गुरुग्रंथ साहब)
जो कुछ होता है ड्रामा में उसकी नूँध है। किसी भी बात की चिंता नहीं करनी चाहिए क्योंकि यह अटल भावी है। जो होना है वही हो रहा है। उसे साक्षी होकर देखना है।

72. बम बम भोले भर दे झोली।
हे परमात्मा! हमारी बुद्धिरूपी झोली ज्ञान रत्नों से भरपूर करो।

73. भृकुटि के बीच चमकता है एक अजब सितारा। (गुरुग्रंथ साहब)
एक अद्भुत सितारा (आत्मा) भृकुटि के बीच सदा चमकता है।

74. मनुष्य से देवता किये करत न लागे वार....। (गुरुग्रंथ साहब)
भगवान को मनुष्य से देवता बनाने में ज्यादा देर नहीं लगती।

75. माया जीते जगतजीत।
माया पर जीत पाना माना सारी दुनिया पर जीत पाना।

76. माँगने से मरना भला।
किसी से कुछ माँगने की बजाए मरना अच्छा है।

77. मियाँ-बीवी राज़ी तो क्या करेगा काज़ी।
अगर हम आपस में मिल-जुल कर रहेंगे तो तीसरा व्यक्ति हमारा कुछ भी बिगाड़ नहीं सकता। दोनों पक्ष अगर आपस में एकमत हैं तो तीसरा क्या कर सकता है।

78. मिठरा घुर त घुराय।
मीठा बनो तो सब आपसे मीठा व्यवहार करेंगे।

79. मिरुआ मौत मलूक का शिकार।
मिरू जानवर को कहते हैं और शिकारी को मलूक कहते हैं। जब शिकारी मिरू को तीर मारता है तो उसकी मौत होती है लेकिन मलूक को खुशी होती है। ऐसे ही विनाश के समय पर माया और प्रकृति दोनों ही फुल फोर्स से अपना अन्तिम दाव लगायेंगे। जैसे किसी स्थूल युद्ध में भी अन्तिम दृश्य ह्रास पैदा करने वाला होता है और हिम्मत बढ़ाने वाला भी होता है। ऐसे ही कमज़ोर आत्माओं के लिए अन्त समय का दृश्य ह्रास पैदा करने वाला होगा और मास्टर

सर्वशक्तिवान आत्माओं के लिए हिम्मत और हुल्लास देने वाला होगा। उनके सामने नई दुनिया के नज़ारे होंगे।

80. मूत पलिती कप्पड़ धोये, दे साबुन लाई वो धोये
भरिए मन पापों के संग, वो धोवे नावे के संग।
(जप साहब, गुरुग्रंथ)

जब कपड़े मैले हो जाते हैं तब साबुन से अच्छी तरह साफ करते हैं। ऐसे ही विकारों से मलीन मन को परमात्मा की याद ही स्वच्छ बनाती है।

81. मुझ निर्गुण हारे में कोई गुण नाहीं, आपेही तरस परोई।
(गुरुग्रंथ साहब)

हे परमात्मा! मेरे में कोई गुण नहीं है। आप मुझ पर तरस खाओ और ऐसा योग्य बनाओ कि मैं सर्वगुण सम्पन्न बन सकूँ। कलियुग के अन्त में शिव बाबा आत्माओं को सृष्टि के आदि, मध्य और अन्त का ज्ञान सुनाकर गुण सम्पन्न बना रहे हैं।

82. यदा-यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानम धर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्।
(श्रीमद्भगवद् गीता, अध्याय-4, श्लोक-7)

जब जब भारत में धर्म की ग्लानि और अधर्म की वृद्धि होती है तब-तब मैं अपने रूप को रचता हूँ अर्थात् साकार रूप से लोगों के सम्मुख प्रकट होता हूँ। इस धरती पर निराकार शिव बाबा, साकार माध्यम ब्रह्मा के तन में अवतरित होकर नई दुनिया, सतयुग की कलम लगा रहे हैं।

83. रघुपति राघव राजाराम, पतित-पावन सीताराम।,
ईश्वर अल्ला तेरो नाम सबको सन्मति दे भगवान।

हे भगवान! ईश्वर, अल्लाह आदि तेरे अनेक नाम हैं। आपही सबको सद्बुद्धि देने वाले हो। परन्तु भगवान को राजाराम कहना अयथार्थ है क्योंकि भगवान कभी राजा नहीं बनते हैं। ऐसे ही पतित पावन सीताराम कहना भी अयथार्थ है क्योंकि पतितों को पावन बनाने वाले, त्रेतायुगी सीता के राम नहीं लेकिन परमधाम निवासी, शिव बाबा हैं।

84. राम गयो रावण गयो जाको बहु परिवार...।

राम, रावण और उसका सारा कुटुम्ब चला गया। कोई भी यहाँ सदाकाल रह नहीं सकता।

85. राम नाम सिमर प्रभात मोरे मन

हे मन ! राम नाम को प्रभात के समय याद करो।

86. राम राजा, राम प्रजा, राम साहुकार है।
बसे नगरी जिये दाता धर्म का उपकार है।।

राम के राज्य में प्रजा भी साहुकार होती है तथा सभी में दातापन के संस्कार होने के कारण धर्म का सदा उपकार होता है। इस संदर्भ में बाबा यह स्पष्ट करते हैं कि भक्ति में एक तरफ रामराज्य की महिमा करते हैं और दूसरी तरफ कहते हैं कि राम की सीता चुराई गयी। रामराज्य जो एक सुख, शान्ति सम्पन्न राज्य है उसमें राम और रावण (राक्षस) की लड़ाई दिखाई गयी है, जो असम्भव है। वास्तव में दिलाराम बाप सिर्फ एक शिव बाबा है जो कि अभी रामराज्य स्थापन कर रहे हैं।

87. वाट वेंदे बाम्मण फाथो।

जैसे रास्ते चलते ब्राह्मण फँस गया। दादा लेखराज, जब से ब्रह्माबाबा बने तब से उनको बहुत कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। लोग जो उन्हें बहुत सम्मान की दृष्टि से देखते थे, तरह-तरह की बातें करने लगे।

88. विनाश काले विपरीत बुद्धि विनश्यन्ति और विनाश काले प्रीत बुद्धि विजयन्ति।

अन्त समय जिनकी बुद्धि में भगवान के प्रति प्रीत नहीं होगी वो विनाश को पायेंगे और जिनकी बुद्धि में भगवान के प्रति प्रीत होगी उनको विजय प्राप्त होगी।

89. शेरनी का दूध सोने के बर्तन में ही ठहर सकता है।

बाबा जो श्रेष्ठ ज्ञान दे रहे हैं वह स्वच्छ मन और बुद्धि में ही धारण हो सकता है।

90. संग तारे कुसंग बोरे।

सच्चे परमपिता का संग पार ले जाता है और बुरा संग डुबो देता है।

91. सच की बेड़ी लुड़े-लुड़े पर डुवे नहीं।

सच की नाव हिलेगी-डुलेगी पर कभी डूबेगी नहीं। जब हम शिव बाबा को अपना खिवैया बनाते हैं और सच्चाई-सफाई से अपना कार्य करते हैं तब हमें हर मुश्किल का सामना करते समय बाप की सहायता का एहसास होता है। हमारे जीवन की नइया में भले ही आँधी-तूफान लगे, बाबा की याद और सच्चाई के बल से हम उनको पार कर लेते

हैं और धोखे से बच जाते हैं।

92. सच तो विठो नच।

जहाँ सच्चाई है वहाँ मन सदा खुशियों में नाचता रहता है।

93. सच्चे दिल पर साहेब राज़ी।

सच्चे दिल वाले पर भगवान सदा खुश रहते हैं।

94. सत्गुरु का निन्दक ठौर न पाये

जो सत्गुरु की निंदा करता या कराने के निमित्त बनता है वह ऊंच पद नहीं पा सकता है।

95. सत्गुरु बिन घोर अंधियारा।

सत्गुरु (शिव बाबा) के बिना घोर अंधकार। जिनके जीवन में परमात्मा का सत्य ज्ञान नहीं उनका जीवन अन्धकार से भरा होता है। ज्ञान ही प्रकाश है।

96. सत् नाम संग है।

सत्य नाम (शिव बाबा) के संग में रहो।

97. सत्युग आदि सत्, है भी सत्, होसी भी सत्।

सत्युग, आदि काल सच्चाई का युग है। यह सत्य है एवं यह पुनः सत्य सिद्ध होगा।

98. सवेल सुमण, सवेल उथण।

जल्दी सोना, जल्दी उठ जाना।

99. सर्व धर्मानि परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।
अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षायिष्यामि मा शुचः।
(भगवत् गीता, 18 अध्याय, 66 श्लोक)

देह के सर्व धर्मों को त्याग तू केवल मुझ एक सर्वशक्तिमान की ही शरण में आ जा, मैं तुझे सर्व पापों से मुक्त कर दूंगा। तू शोक मत कर।

100. साठ तो लगी लाठ।

साठ के बाद लाठी पकड़कर चलना पड़ता है।

101. सांप भी मरे और लाठी भी न टूटे।

अपने कार्य में सफलता भी प्राप्त हो और किसी को दुःख भी न मिले, ऐसी युक्ति से हर कर्म करना चाहिए।

102. सिमर-सिमर सुख पाओ, कलह–क्लेश तन माह मिटावे।
(सुखमनि साहब, गुरुग्रंथ)

भगवान को ऐसा याद करो जो सब झगड़े एवं शारीरिक बीमारी दूर हो जाये और सुख मिले।

103. सुबह का साईं बेड़ा बने लाई।

हे प्रातः स्मरणीय प्रभु! बेड़ा पार लगाना, कोई गांठ का धनी और मन का भोला मिलाना। मुझे ऐसा ग्राहक भेजो जो सारे दिन की आमदनी देकर जाये। व्यापारी लोग भगवान से ऐसी प्रार्थना करते हैं। लेकिन

ब्राह्मण बच्चों को स्वयं भगवान ही मिल गया। उसको थोड़ा भी कुछ अर्पण करेंगे तो वह बदले में अविनाशी खज़ाना देता है।

104. सुरमण्डल के साज़ को देह-अभिमानी सांडे क्या जानें।

जिनमें अंहकार होता है, उन्हें देह-अभिमानी सांडा (गिरगिट) कहा जाता है। वे देवताओं की सभा की दिव्यता को जान भी नहीं सकते।

105. सौ-सौ करिस सिंगार, पोय ब खोदड़े जो पुट खोदड़ो।
(सौ बार शृंगार किया, गधे का बच्चा गधा ही ठहरा।त्र)

सर्व विदित है कि गधे के बच्चे को कितना भी जेवरों से शृंगार किया जाये तो भी वह मिट्टी में लोट-पोट कर सारा शृंगार ही बिगाड़ देता है और मिट्टी से भर जाता है। शिव बाबा मनुष्यात्माओं को ज्ञान रूपी रत्नों से शृंगारते हैं ताकि वे अच्छे बनें लेकिन कई बच्चों की पुरानी आदतें, पुराने संस्कार कुछ ऐसे हैं कि पुन: स्वयं को बुरे आचार, विचार, संस्कार से भर लेते हैं।

106. हाथ जिसका हिंय पहला पुर सो पहुंचे...।

जिसका हाथ सदा दाता के समान होता है उसे प्राप्ति भी प्रथम स्तर की होती है।

107. हिम्मते बच्चे मददे बाप।

जो बच्चे हिम्मत रख आगे बढ़ते हैं उन्हें बाप की मदद जरूर मिलती है।

108. हीरे जैसा जन्म अमोलक, कौड़ी बदले खोया रे ...।

संगमयुगी जीवन हीरेतुल्य है। इसे विनाशी धन (कौड़ियों) के पीछे नहीं गँवाना है।

109. हुक्मी हुक्म चला रहा है..।

जो कुछ भी होता है, भगवान की आज्ञा समझकर उस आज्ञा को मानकर चलना है।

110. ज्ञान अंजन सत्गुरु दिया, अज्ञान अंधेर विनाश (सुखमनि साहब)

सत्गुरु परमात्मा जो ज्ञान देते हैं उससे अज्ञान अंधकार, मानसिक अंधेरा दूर हो जाता है।

तृतीय अध्याय

साकार मुरलियों में प्रयुक्त कहानियों का संक्षिप्त विवरण एवं आध्यात्मिक भाव

दधीचि
(स्कंद पुराण)

दधीचि एक ऐसे ऋषि थे जिन्होंने अपने आपको विश्व कल्याण अर्थ अर्पित कर दिया। हर समय असुर और देवताओं के बीच युद्ध चलता रहता था। स्वर्ग का राज्यभाग्य सदा के लिए देवताओं से लेने के लिए असुरों ने देवताओं के अस्त्र-शस्त्र चुराने का षड़यन्त्र रचा। वे एक के बाद एक उनके शस्त्र चुराने लगे। कुछ समय पश्चात् जब देवताओं को खोते हुए शस्त्रों का पता चला तो वे उन्हें छिपाने हेतु अति सुरक्षित स्थान ढूँढ़ने लगे।

इन्द्र जी और अन्य देवतागण दधीचि ऋषि से मिले और उनसे आग्रह किया कि वे देवताओं के सारे अस्त्र-शस्त्र अपनी निगरानी में सुरक्षित रखें। जब जरूरत होगी तो वे हथियार उनसे मांग लेंगे। सहृदय दधीचि ऋषि ने तुरन्त स्वीकृति दे दी और देवताओं के शस्त्रों की कड़ी हिफाज़त करने लगे।

निश्चिंत देवतागण बहुत समय तक शस्त्रों के बारे में पूछने तक नहीं आये। दधीचि ऋषि को विश्व भ्रमण करके सारे पुण्य-क्षेत्रों का दर्शन करने का संकल्प आया लेकिन शस्त्रों के संरक्षण की जिम्मेवारी अभी भी दधीचि जी पर थी। इसलिए दधीचि ऋषि ने सारे शस्त्रों को जलाकर राख कर दिया और निगल गये। ऐसा करने से शस्त्रों की सारी शक्ति सूक्ष्म रूप में दधीचि ऋषि के सारे शरीर में फैल गयी और उनका शरीर शक्तिशाली बन गया। उसके बाद वे अपनी पत्नी के साथ तीर्थयात्रा पर चले गए।

कुछ समय पश्चात् पृथ्वी पर वृत्तासुर नामक एक असुर का उपद्रव बढ़ गया लेकिन वृत्तासुर को हराने के लिए देवताओं के पास उनके शस्त्र तो थे नहीं। इसलिए देवतागण ऋषि के पास पहुँचे और उनसे अपने शस्त्र वापस मांगे। दधीचि ऋषि ने उनको सारी बात समझाई और कहा कि जब उनकी पत्नी घर

पर न हो तब आना। देवतागण ऋषि की पत्नी की अनुपस्थिति में पुनः पधारे। दधीचि ऋषि ने अपने को जलाने के लिए योगबल द्वारा अग्नि को उत्पन्न किया और देवताओं से कहा कि उनकी हड्डियों से अस्त्र-शस्त्र बना लें। इस कार्य से आपको कोई पाप नहीं लगेगा। ऐसा कहकर उन्होंने अपने आपको अग्नि में जला दिया।

दधीचि ऋषि की हड्डियों से देवताओं ने अनेक अस्त्र-शस्त्र बनवाये। उनकी रीढ़ की हड्डी से एक बहुत ही शक्तिशाली हथियार बना जिसका नाम पड़ा वज्रायुद्ध। दधीचि जी के योगबल द्वारा देवताओं के शस्त्रों की महिमा पद्मगुणा बढ़ गयी।

आध्यात्मिक भाव – जैसे दधीचि ऋषि ने विश्व कल्याण अर्थ अपनी हड्डी-हड्डी स्वाहा कर दी, ऐसे ही हमको भी ईश्वरीय सेवा में अपना तन, मन, धन खुशी से समर्पित करना चाहिए।

अंगद

(किष्किन्धा काण्ड, रामायण)

अंगद बाली का पुत्र था। वह बहुत समझदार, धार्मिक और शक्तिशाली व्यक्ति था। श्रीराम का असीम भक्त था और सुग्रीव (बाली का छोटा भाई) के राज्य में बहुत वफ़ादारी से सेवा करता था।

जब सीता को रावण ने चुराया तब अंगद को श्रीराम का दूत बनाकर भेजने का निर्णय लिया गया। अंगद रामदूत बनकर रावण की सभा में प्रविष्ट हुआ। अंगद ने बहुत ही नम्रता से रावण को समझाया कि उसने सीता का अपहरण करके बहुत बड़ा पाप किया है इसलिए वो अपना अपराध स्वीकार कर, सीता जी को छोड़, श्रीराम की शरण में आ जाए। घमण्डी रावण ने अंगद को कहा कि वह उन्हें एक क्षण में उठा फेंकेगा। तब अंगद ने रावण को ललकारते हुए कहा कि इतनी मेहनत करने की जरूरत नहीं है। अगर वह अपनी शक्ति दिखाना चाहता है तो उनका एक पैर ही हिलाकर दिखाए। सभा में उपस्थित सभी राक्षस वीरों ने अंगद का पैर हिलाने का भरसक प्रयास किया परन्तु असमर्थ रहे। जब रावण अंगद के पैर को पकड़कर हिलाने के लिए आगे बढ़ा तो अंगद ने कहा - ''हे रावण! मेरे पाँव पकड़ने की बजाए यदि श्रीराम की शरण लोगे तो पुण्य आत्मा बन जाओगे।''

आध्यात्मिक भाव – 'निश्चयबुद्धि विजयन्ति', अंगद की कहानी इस मन्त्र का प्रत्यक्ष प्रमाण है। अंगद की अटूट भक्ति-भावना और सम्पूर्ण निश्चय श्रीराम में था इसलिए उनको कोई हिला नहीं सका। इसी तरह माया भी बुद्धिरूपी पाँव को हिलाने के लिए भिन्न-भिन्न रूपों से, भिन्न-भिन्न समय पर आती है। जो निश्चय-बुद्धि हैं उनका माया कुछ भी बिगाड़ नहीं सकती है।

गज और ग्राह

(भागवत्, अष्टम् स्कन्धम्)

बहुत समय पहले त्रिकूट नामक पर्वत के पास एक गज (हाथी) अपने परिवार के साथ रहता था। वहाँ का वातावरण बहुत सुन्दर था। मीठी नदियाँ, बगीचे, रंग-बिरंगें खुशबूदार फूलों से वह स्थान अति सुन्दर लगता था। एक दिन गज अपने परिवार के साथ सरोवर में नहाने के लिए निकला। सरोवर में बहुत आनन्द से और स्वच्छंदता पूर्वक तैर रहा गज आने वाले संकट को पहचान न सका।

उसी सरोवर में एक ग्राह (मगरमच्छ) भी रहता था। ग्राह ने गज के पैर को पकड़कर अन्दर खींचना शुरू किया और दोनों ने अपनी-अपनी शारीरिक शक्ति को आज़माना शुरू किया। गज़ अच्छे डीलडौल वाला विशालकाय शक्तिशाली प्राणी था परन्तु उसकी शक्ति सफल न हुई। ग्राह खींचता ही गया। गज जल में धंसता चला गया। गज के प्राण संकट में पड़ गये। किनारे पर खड़े गज के साथी सदस्य देखते ही रह गये पर गज की मदद नहीं कर पाए। आखिर गज ने सोचा कि इस संकट से बचाने वाला एक ही परमात्मा है। ऐसा निश्चय करके सभी को भूलकर एक ही श्रीहरि को अपनी रक्षा के लिए उसने पुकारा। दयालु श्रीहरि ने तुरन्त प्रत्यक्ष होकर स्वदर्शन चक्र से ग्राह का संहार कर दिया।

आध्यात्मिक भाव – गज-ग्राह युद्ध की कथा, मनमनाभव के मन्त्र द्वारा सफलता मिलने की बात को ही रूपक द्वारा स्पष्ट करती है। जब गज पूरा डूब जाता है और केवल सूंड का थोड़ा हिस्सा ही रह जाता है तब वह अपनी शक्ति को, अपने सम्बन्धियों को तथा अपने आपको भूलकर, अनेकता से निकलकर एक परमपिता परमात्मा को याद करता है। उस अन्तिम समय में

याद करते ही उसे तुरन्त ईश्वरीय सहायता मिलती है। यही स्थिति मनमनाभव की स्थिति है।

ज्ञान धारण करने वाली मनुष्यात्मा ही गज अर्थात् महारथी के समान है। माया ही इस संसार रूपी सागर में ग्राह है। माया रूपी ग्राह, ज्ञानी व रुस्तम बच्चों को खा लेती है। ग्राह के समान माया भी गुप्त रूप से आकर ज्ञानी को पकड़ लेती है। ऐसी माया से, एक परमात्मा की याद से ही मुक्ति पाई जा सकती है।

सत्यनारायण की सत्यकथा

(स्कंध पुराण, रेवा खण्ड)

भारत में अनेक लोग सत्यनारायण का व्रत रखते हैं और कथा भी सुनते हैं। सत्यनारायण की कथा में लिखा है कि यह व्रत दु:ख और शोक आदि को शान्त करने वाला, धन-धान्य बढ़ाने वाला, सौभाग्य देने वाला तथा सब जगह विजय प्राप्त कराने वाला है। बताया गया है कि यह कथा नैमिषारण्य तीर्थ में सूत जी, जोकि व्यास जी के शिष्य थे, ने शौनकादि अट्ठासी हज़ार ऋषियों को सुनाई। परन्तु जब मनुष्य प्रचलित सत्यनारायण कथा पढ़ता या सुनता है तो इसमें न तो श्री नारायण की कोई जीवन-कहानी है, न सत्य स्वरूप परमात्मा का कोई परिचय है और न ही किसी व्रत की व्याख्या की गयी है। केवल लिखा है कि अमुक-अमुक ने इस व्रत को किया तो उसे धन-धान्य, मुक्ति और वैकुण्ठ पद की प्राप्ति हुई और अमुक-अमुक ने इस व्रत को न करने का संकल्प किया या व्रत का प्रसाद नहीं लिया तो विपत्ति या दु:ख में पड़ गये।

उदाहरण के तौर पर इसमें सबसे पहली कथा तो यह है कि काशीपुरी में शिवानन्द नाम का एक अत्यन्त निर्धन बाह्मण था जो कि भीख माँगने पर भी भूख से पीड़ित रहता था। भगवान उसके सामने एक बूढ़े ब्राह्मण के रूप में आये और उन्होंने उसे सत्यनारायण का व्रत करने के लिए कहा। उस व्रत को करने से उसे धन-सम्पत्ति तथा सुख का लाभ हुआ। दूसरी कथा लकड़ी बेचने वाले एक निर्धन भील की है। वह भी इस व्रत को करने से निर्धनता, दु:ख तथा शोक से छूट गया और अन्त में वैकुण्ठ में देवपद को प्राप्त हुआ।

सत्यनारायण कथा में जो सबसे बड़ी कथा लिखी हुई है वह यह है कि एक वैश्य ने यह संकल्प किया कि उसके सन्तान होगी तो वह यह व्रत अवश्य

करेगा। परन्तु उसको जब एक कन्या उत्पन्न हुई तो उसने अपना वचन टाल दिया और कहा कि इसके विवाह के अवसर पर करूँगा। उस अवसर पर भी वह व्रत करना भूल गया। इसके परिणाम स्वरूप सत्यनारायण ने रुष्ट होकर उसे शाप दिया कि उस पर दु:ख आये। तभी वहाँ राजा के यहाँ चोरी हो गई और राजा के दूत, वैश्य और उसके दामाद को चोर मानकर पकड़कर राजा के पास ले गये। राजा ने उन्हें जेल में बंद कर दिया। उधर लीलावती (वैश्य की स्त्री) ने पति के लौटने के मनोरथ को लेकर सत्यनारायण-व्रत किया और भगवान ने राजा को स्वप्न में आदेश दिया कि इन दोनों को छोड़ दो वरना मैं तुम्हारा नाश कर दूँगा।

जब राजा द्वारा मुक्त होकर दोनों अपने बेड़े की ओर लौट रहे थे तो सत्यनारायण ने सादे वेष में आकर पूछा - ''वैश्य, तुम्हारे बेड़े में क्या है?'' वैश्य बोला - ''क्या कुछ लेने का विचार है क्या? इसमें तो लता-पत्ता आदि है।'' तब बदले हुए वेश में सत्यनारायण बोले - 'तथास्तु'। इसके परिणाम स्वरूप उस बेड़े में पड़ा सब धन-सोना आदि लता-पत्ता ही बन गया। परन्तु जब वैश्य ने लौटकर उस साधु वेशधारी से दु:ख प्रगट किया तो उसने कहा - ''तुम मेरी पूजा नहीं करते हो और व्रत नहीं करते हो इसलिए मेरी इच्छा से तुम्हें यह सब दु:ख प्राप्त हो रहा है।'' जब वैश्य ने व्रत करने का आश्वासन दिया तब भगवान की प्रसन्नता के फल स्वरूप लता-पत्ता के स्थान पर पहले की तरह सोना-चांदी, धनादि प्रगट हो गये। वैश्य और उसका दामाद आगे नगर के तट तक आ पहुँचे और बेड़े को तट से लगाकर उन्होंने नगर की भूमि पर पग धरे। कलावती (वैश्य की पुत्री), जो कि सत्यनारायण व्रत कर रही थी, पति और पिता के बेड़े के आने की सूचना पाकर सत्यनारायण का प्रसाद छोड़कर बेड़े की ओर चल पड़ी। प्रसाद न लेने का परिणाम यह हुआ कि उसका पति अदृश्य हो गया और बेड़ा डूबकर सागर तल में विलीन हो गया। परन्तु जब कलावती प्रसाद खाकर लौट आई तो उसका पति पुन: प्रकट हो गया और डूबा

हुआ बेड़ा भी तैर आया।

आध्यात्मिक भाव – श्री सत्यनारायण कीकी कथा में जो वृद्ध ब्राह्मण आकर व्रत करने के लिए कहता है वे प्रजापिता ब्रह्मह्मा हैं अर्थात् सत्य स्वरूप शिव बाबा एक साधारण वृद्ध ब्राह्मण के तन में दिव्य प्र प्रवेश होकर श्री नारायण बनने की सच्ची कथा सुनाते हैं और पवित्रता अथवा ब्रह्मचर्य रूपी व्रत बताते हैं। शिव परमात्मा उसी वृद्ध प्रजापिता ब्रह्मा रूप ब्राह्मण द्वारा ही कंगाल भारत को कंचन के महलों वाला, सतयुगी पावन भारत अथवा स्वर्ग बनाते हैं। उसी रूप में भीलों के समान प्राय: निर्धन बने भारत को परमपिता शिव धनवान बना देते हैं और व्यापारियों के भी डूबे हुए जीव रूपी बे बेड़े को निकालकर पार उतारते हैं। सतयुग में सर्वगुण सम्पन्न, मर्यादा पुरुषोत्तम, 16 कला संपूर्ण श्री सत्यनारायण थे। वे ही त्रेतायुग में 14 कला सम्पन्न चन्द्रवंशी बनते हैं। धीरे-धीरे वे पांच विकारों के जाल में जकड़ते जाते हैं। तब द्वापर में केवल 8 कला ही बचती है। आत्माभिमानी से देहाभिमानी और पूज्य से पुजारी बन जाते हैं। कलियुग के अन्त में जब पूर्ण विकारी बन जाते हैं, हैं, सभी मनुष्य आत्माएं भी बहुत दु:खी बन जाती हैं तब अपने बच्चों की पुकार सुनकर पतित-पावन परमपिता परमात्मा शिव गीता में अपने वचन अनुसासार इस कलियुगी, आसुरी सम्पदा वाली सृष्टि पर दिव्य रीति से अवतरित होते हैं हैं। जिस साधारण एवं वृद्ध मनुष्य के शरीर में (सत्यनारायण के 84 वें जन्म में) प्र) प्रवेश करते हैं उसे उसके पूर्व के सभी जन्मों की कथा सुनाकर पतित से पावावन बनाते हैं और मुक्ति-जीवनमुक्ति का भागी बनाते हैं। यही है सत्य-नारायणयण की सच्ची कथा। यही वो कथा है जिससे श्री नारायण फिर से सर्वगुणसम्पन्न न बनते हैं। वास्तव में किसी भी नियम वा दिव्यगुण को धारण करके उसे अपनाये ाये रहने के लिए दृढ़ संकल्प किये रहना ही व्रत लेना है। इस प्रकार जो कोई इस स सच्ची कथा को सुने और पवित्रता का व्रत धारण करे तो वह अवश्य ही नर से से श्री नारायण बनता है।

भस्मासुर
(शिव पुराण)

बहुत समय पहले की बात है भस्मासुर नामक एक राक्षस था। उसने शिव की बहुत उपासना की। उसकी तपस्या से प्रसन्न होकर भोलेनाथ शिव ने उससे कुछ वर माँगने को कहा। स्वार्थी भस्मासुर ने तुरन्त कहा कि उसे ऐसा वर दें कि वह जिसके सिर पर हाथ रखे वह राख में बदल जाये। उसकी तपस्या के फलस्वरूप शिव जी को उसकी मनोकामना पूर्ण करनी पड़ी परन्तु क्रूर भस्मासुर ने तो वर का प्रयोग स्वयं भगवान शिव पर ही करना चाहा। भस्मासुर से बचने के लिए शिव को विष्णु जी का आश्रय लेना पड़ा। विष्णु जी, जो भस्मासुर की कमजोरी को जानते थे, मोहिनी रूप धारण कर नृत्य करते हुए भस्मासुर के सामने पहुँच गये। भस्मासुर मोहिनी रूप पर मोहित हो उनके पीछे भागा और उनके सामने शादी का प्रस्ताव रखा। मोहिनी ने प्रस्ताव स्वीकार तो किया लेकिन एक शर्त पर। उसने कहा, यदि तुम मेरी तरह हूबहू नृत्य करोगे तो मैं तुमसे शादी करूँगी। भस्मासुर खुश होकर मोहिनी के नृत्य की नकल करने में मगन हो गया। नृत्य करते-करते मोहिनी ने अपने दोनों हाथ अपने ही सिर पर रखने की नृत्य भंगिमा की। भस्मासुर जो नृत्य करने में मगन था अपने तप और वर के बारे में भूल गया। उसने मोहिनी की ही तरह अपने दोनों हाथ अपने ही सिर पर रख दिये और परिणाम स्वरूप भस्मासुर खुद ही राख का ढेर हो गया।

आध्यात्मिक भाव – राजयोग द्वारा हमें दिव्य शक्तियाँ प्राप्त होती हैं और भगवान से भी अनेक दुआयें मिलती हैं। दिव्य शक्तियाँ प्राप्त करना एक चीज़ है और प्राप्त हुए वरदान वा प्राप्ति को सफल करना दूसरी बात है। हम अहंकार, क्रोध, मोह और काम जैसे विकारों के वशीभूत हो जाते हैं तो उन्हें खो देते हैं। श्रीमत् अथवा मिले हुए वरदानों को सही ढंग से कार्य में नहीं लाते हैं तो खुद ही खुद को भस्म कर लेते हैं।

कीचक

(अरण्य पर्व, महाभारत)

बारह साल का अरण्य वास पूरा करके एक साल अज्ञातवास में रहने के लिए पाण्डव अपना वेष और भाषा बदलकर विराट राज्य में रहने लगे। विराट राजा के साले का नाम था कीचक। वह दुष्ट बुद्धि इंसान था। बूढ़े विराट के राज्य का सारा कारोबार कीचक ही देखता था। विराट राजा की पत्नी सुदेष्णा देवी के पास द्रौपदी सैरेन्ध्री के नाम से रहती थी। कीचक द्रौपदी पर मोहित था और अपनी विकारी दृष्टि से सदा उसे दुःख देता रहता था। पाण्डवों में केवल भीम ही कीचक का वध कर सकता था लेकिन द्रौपदी डरती थी कि कहीं कीचक का वध उनके अज्ञातवास को भंग न कर दे इसलिए वह चुपचाप सब सहन करती जा रही थी।

आखिर जब उनका अज्ञातवास तीन दिन का रह गया तब द्रौपदी ने कीचक के बारे में भीम को बताया। भीम के कहे अनुसार, कीचक पर झूठा प्यार दिखाकर तथा फुसलाकर, द्रौपदी ने उसे नर्तनशाला में आने के लिए कहा। वहाँ भीम ने कीचक का वध कर दिया।

आध्यात्मिक भाव – जिनकी कामुक विकारी दृष्टि-वृत्ति रहती है वे कीचक के समान हैं। उनका पतन अवश्य होता है।

किंग मिडास

बहुत समय की बात है एक बहुत धनवान राजा था। उसका नाम मिडास था। धनवान होने पर भी वह सन्तुष्ट नहीं था। उसे पैसे और सोने का बहुत अधिक लालच था। एक दिन उसके सपने में एक परी आयी। वह जाग उठा। उसने देखा कि वह परी उसके सामने खड़ी है। अपने बिस्तर से उठकर राजा परी के चरणों में गिर गया। उसने परी की प्रशंसा करते हुए कहा कि ''आप कितनी सुंदर हो, मैंने सुना है कि परियाँ मनुष्य की इच्छायें पूर्ण करती हैं।'' परी मुस्कराते हुए बोली, ''हे राजन ! कहिए, आपकी क्या इच्छा है ? हम आपकी इच्छा पूर्ण करेंगे।'' राजा को कुछ समय तक समझ में नहीं आया कि वह क्या मांगे। थोड़ी देर बाद राजा ने कहा कि ''हे परी! आप मुझे ऐसी शक्ति दो जिससे कि मैं जिस चीज़ को भी छूऊँ वह सोना बन जाये।'' परी ने राजा की इच्छा पूर्ण कर दी। धीरे से राजा एक पत्थर के पास गया। राजा ने अपना हाथ जब पत्थर को लगाया तो पत्थर सोना बन गया। राजा तो जैसे खुशी से नाचने लगा। राजा ने एक फूल को देखा, उसे छुआ तो वह भी सोना बन गया। राजा अपने बगीचे में जाकर सब फूल-पौधों को छूने लगा। वह जिसे भी छूता वह सोने में परिवर्तित हो जाता। राजा तो जैसे खुशी से पागल हुआ जा रहा था।

कुछ देर बाद जब उसे भूख लगी तब उसने फल और पानी मँगवाया और जब खाने के लिए हाथ लगाया तो फल सोने में बदल गये। पानी के जग को छूते ही वह भी सोने का हो गया। राजा अब न कुछ खा सकता था न पी सकता था। अपनी मूर्खता पर राजा को बहुत दु:ख हुआ। राजा को दु:खी देखकर राजा की बेटी उसके पास आयी तो राजा ने प्यार से अपनी बेटी के सिर पर हाथ रखा तो वह भी सोने की मूर्ति बन गयी। अब राजा और अधिक दु:खी हो गया।

पश्चाताप के आँसूओं में राजा जब डूबा हुआ था तब वही परी उसके

सामने पुन: प्रत्यक्ष हो गयी। उसने कहा -''हे राजन, मैंने तो सोचा कि आप बहुत खुश होंगे लेकिन आप तो बहुत दु:खी दिख रहे हैं। क्या आपको मिली शक्ति से आप खुश नहीं हैं? क्या आपको कुछ और चाहिए।'' तब राजा ने परी के पाँव पकड़े और माँफी मांगते हुए कहा, ''कृपया आप यह शक्ति वापस ले लीजिए और मुझे मेरी बेटी तथा मेरा सामान्य जीवन वापस दे दीजिए। मेरे पास बहुत धन है और आज से मैं कभी लालच नहीं करूँगा। अपना धन गरीबों में बाँटूँगा।'' यह सुनकर परी ने अपनी दी हुयी शक्ति वापस ले ली। राजा बहुत खुश हो गया और सदा के लिए उसने सोने के प्रति अपना लालच छोड़ दिया।

आध्यात्मिक भाव – लोभ सदा हानि पहुँचाता है। जितना है उतने में ही सन्तुष्ट रहना भी एक कला है। बाबा कहते हैं कि स्थूल धन कमाने में ही सारा समय गँवाना नहीं है। उसके साथ-साथ अपने जीवन में परोपकार और आध्यात्मिक जागृति आवश्यक है।

सुदामा
(भागवत्)

सुदामा और श्रीकृष्ण बचपन के साथी थे। सांदीपनी ऋषि के आश्रम में दोनों एक साथ पढ़ते थे। सुदामा एक गरीब ब्राह्मण था और श्रीकृष्ण द्वारिका के राजकुमार। विद्याभ्यास पूरा कर दोनों अपने-अपने स्थान पर चले गये। श्रीकृष्ण ने द्वारिका जाकर राज्य कारोबार संभाला तो सुदामा की शादी गाँव की एक गरीब कन्या से हो गयी। सुदामा को अनेक सन्तानें हुईं। एक तो गरीबी और दूसरा बढ़ा हुआ परिवार। इससे सुदामा के हालात और भी खराब होते गये। बच्चों और गरीबी की परेशानी से तंग आकर एक दिन सुदामा की पत्नी ने उसे गुस्से में कहा कि आप अपने मित्र कृष्ण की महिमा का वर्णन करते नहीं थकते। इतना धनवान, इतने बड़े राज्य का मालिक आपका मित्र है तो क्या वह आपको मदद नहीं कर सकता। क्यों नहीं आप उनसे भेंट करते ताकि हमारे हालात कुछ तो सुधरें। पत्नी के जोर देने पर सुदामा कृष्ण से मिलने चल पड़ा लेकिन मित्र को भेंट क्या दे? घर में तो कुछ था नहीं। थे तो केवल मुट्ठीभर चावल। उन्हीं को एक पोटली में बाँधकर बगल में दबाकर सुदामा द्वारिका पहुँचा।

सुदामा के आने की खबर सुनकर श्रीकृष्ण आनंद विभोर होकर उसके स्वागत् में प्रवेश द्वार पर पहुँचे। उन्हें प्यार से गले लगाकर बड़ी आत्मीयता से अपने दरबार में, अपने ही सिंहासन पर बिठा दिया। उनका यह प्यार और सत्कार पाकर सुदामा तो जैसे गद्‌गद हो गये लेकिन दरबारी भी कृष्ण को इस रूप में देखकर आश्चर्यचकित हुए बिना न रह सके।

कृष्ण ने बड़े प्यार से पूछा कि भाभी ने उनके लिए क्या भेजा है? संकोच के मारे सुदामा ने जो चावल की पोटली छुपा रखी थी, वह कृष्ण को दे दी।

कृष्ण ने बड़ी खुशी से चावल का एक-एक दाना खाया। कृष्ण की निरहंकारिता और प्यार देखकर सुदामा तृप्त हो गया और अपने आने का उद्देश्य ही भूल गया। कृष्ण के पूछने पर भी मुख से अपनी सहायाता के बारे में कुछ न कह सका। श्रीकृष्ण का अपार प्यार और सत्कार स्वीकार कर सुदामा अपने गांव वापस लौट आया लेकिन यह क्या? उसका गांव तो पूरी तरह से बदल गया था। वह स्वयं भी धोखे में आ गया कि मैं सही जगह पर तो आया हूँ ना। इतने में गांव वालों को और अपने परिवार जनों को रेशामी वस्त्रों में आता देखकर सुदामा मन ही मन सब समझ गया कि कृष्ण ने बिना कुछ कहे ही उसकी सर्व मनोकामनाएं पूरी कर दी हैं। उसका घर महल बान गया था जिसमें पशुधन सहित सर्व सुविधाएं थीं। सुदामा ने मन ही मन श्रीकृष्ण पर धन्यवाद की वर्षा की।

आध्यात्मिक भाव – शिव बाबा गरीब निवाज़ हैं। सच्ची दिल और भावना से कोई एक पैसा भी ईश्वरीय सेवा में लगाता है तो उसे पद्मापदम गुणा रिटर्न में मिलता है। भोलानाथ शिव बाबा बच्चों की सच्चे दिल की भावना का भाड़ा पूरा-पूरा देते हैं। जो जितना तन, मन, धन, मनसा, वाचा, कर्मणा सेवा में लगाता है उसका फल उसे इस जन्म में और आने वाले 21 जन्मों तक मिलता ही रहता है।

अंधे और हाथी

एक गाँव में अंधों के लिए एक पाठशाला थी। एक बार गुरुजी को संकल्प आया कि इन्हें हाथी के बारे में बताऊँ। गुरुजी अंधों को हाथी के पास ले गये और कहा कि इसे छूकर देखो कि हाथी कैसा है। अंधों ने उसे छूना शुरू किया। एक ने उसका कान पकड़कर सोचा कि हाथी तो सूप (अनाज साफ करने वाला बर्तन) जैसा है। दूसरे ने पैर पकड़े और सोचने लगा कि हाथी एक स्तम्भ जैसा है। तीसरे ने सूंड को छूआ और कहने लगा, अरे हाथी तो एक मोटे डंडे जैसा है। चौथे अंधे ने हाथी के पेट को छूकर सोचा कि हाथी तो दीवार जैसा है। पाँचवें ने हाथी की पूंछ पकड़कर सोचा कि हाथी तो रस्सी जैसा है।

बाद में जब सभी हाथी के बारे में अपनी-अपनी राय बताने लगे तो उनमें उसके अस्तित्व को लेकर वाद-विवाद होने लगा। पहले ने कहा, हाथी सूप जैसा है तो दूसरा कहने लगा, नहीं, वो तो स्तंभ जैसा है। तीसरा कहने लगा कि अरे हाथी तो मोटे डंडे के समान है, तो चौथे ने उसे टोकते हुए कहा कि हाथी तो एक दीवार की तरह है। इतने में गुरुजी ने बीच में ही रोककर सबको शान्त करते हुए कहा कि आपमें से कोई भी गलत नहीं है लेकिन आप में से एक-एक ने हाथी का एक-एक भाग पकड़कर उसे ही पूरा हाथी समझ लिया। वास्तव में, आप सभी के अनुभवों को मिलाकर ही पूरे हाथी की कल्पना की जा सकती है।

आध्यात्मिक भाव – भगवान के अस्तित्व के बारे में भी इस दुनिया में जितने लोग हैं उतनी ही बातें, उतने ही विचार हैं। सर्वशक्तिमान परमात्मा से सम्बन्धित किसी एक बात को जान लेने का मतलब यह नहीं कि उन लोगों ने परमात्मा के अस्तित्व के बारे में सब कुछ जान लिया है। जब

भगवान इस धरती पर अवतरित होकर अपना परिचय खुद देते हैं तब ही उनके बारे में पूरी रीति से जाना जा सकता है। जिनके पास भगवान का दिया हुआ ज्ञान-चक्षु नहीं है वो जैसे अंधे हैं। भगवान अपने परिचय में स्वयं कहते हैं कि मेरा नाम सदाशिव है। मैं निराकार ज्योतिर्बिन्दु स्वरूप हूँ और मैं परमधाम निवासी हूँ।

अजामिल
(कार्तिक पुराण)

कन्याकुब्ज नामक एक शहर में एक ब्राह्मण रहता था। वह बड़ा विद्वान और चारों वेदों में माहिर था। उसकी पत्नी गुणवान थी। उनके पुत्र का नाम अजामिल था। माता-पिता अपने बेटे की पालना बड़े ही प्यार से करते थे। अति लाड़-प्यार से अजामिल लापरवाह हो गया। कुसंग में फँसने के कारण उसका ध्यान पढ़ाई से भी हट गया। यहाँ तक कि उसने पवित्रता की निशानी जनेऊ भी निकाल दी और विकारी मनुष्य बन गया।

कुछ समय पश्चात उसका एक स्त्री से लगाव हुआ और उसने उसके साथ विवाह कर लिया। शादी के बाद माता-पिता को भूलकर वह अपनी पत्नी के साथ ही रहने लगा। अजामिल के क्रूर व्यवहार के कारण मित्र-संबंधी उससे दूर रहने लगे। मित्र-संबंधियों की दूरी का उस पर कोई भी प्रभाव नहीं पड़ा। वह और ही स्वेच्छाचारी (मनमाना काम करने वाला) हो गया। वह खुश था कि उस पर किसी का बंधन नहीं है। जीव-जन्तुओं का शिकार कर वह जीवन यापन करता रहा।

एक बार अजामिल और उसकी पत्नी जंगल में गये। वहीं पर किसी दुर्घटना के कारण उसकी पत्नी की मृत्यु हो गयी। समय बीतता गया और अजामिल की बेटी जवान हुई। अजामिल, जो अब तक पूरा भोगी बन चुका था और विकारों के कारण अपना विवेक खो बैठा था, अपनी बेटी पर ही मोहित हो गया। उन दोनों के तीन बेटे हुए। उनमें से दो मर गये और तीसरे का नाम नारायण रखा। अजामिल अब वृद्ध हो गया, जब उसके परलोक जाने का समय निकट आया तब उसे जीवनभर के किये हुए पापों का एहसास होने लगा। पश्चाताप् की अवस्था में वह अपने पुत्र नारायण का नाम लेने लगा और उसे

पुकारते-पुकारते मर गया। अजामिल के मरने के बाद यमदूत उसे नर्क ले जाने के लिए आये। साथ-साथ विष्णु के दूत भी अजामिल को स्वर्ग में ले जाने के लिए आये। यमदूतों ने विष्णु के दूतों को संबोधित करते हुए कहा कि आजामिल स्वर्ग में जाने के लायक नहीं है, वह नितांत पापी है। उसने अपनी ही कन्या के साथ दुर्व्यवहार किया है। तब विष्णु के दूतों ने उन्हें समझाया कि यदि कोई जाने या अनजाने में विष पीता है तो मर जाता है, वैसे ही कोई जाने या अनजाने में भी ईश्वर का नाम लेता है और अपने पापों का प्रायश्चित्त करता है तो वह स्वर्ग में जाने के योग्य हो जाता है। ऐसा कहते हुए विष्णु के दूत अजामिल को स्वर्ग में ले गये। कई कथाओं में अजामिल को एक नेक आदमी की तरह भी दिखाया गया है। वह बड़ों का आदर करता था, बहुत रहमदिल और सच्चा इन्सान था। पर शादी के बाद वह बिल्कुल ही बदल गया। अपनी संस्कृति और मूल्यों को भूलकर बुरी आदतों का शिकार बन गया। यहाँ तक कि चोरी भी करने लगा। मरते समय उसने अपने पुत्र नारायण को पुकारते-पुकारते शरीर त्याग दिया। ईश्वर का नाम लेते-लेते शरीर छोड़ने के कारण उसे स्वर्ग में स्थान मिल गया।

आध्यात्मिक भाव – बाबा हमेशा मुरली में कहा करते हैं कि अजामिल जैसा पापी देखना हो तो यहाँ ही देखो॥ दया और क्षमा के सागर परमात्मा शिव बाबा इस धरती पर अवतरित होकर अजामिल जैसी पापी और पत्थर जैसी कठोर आत्माओं का भी उद्धार कर रहे हैं। इसी के यादगार स्वरूप भक्ति में शिव की पूजा में अक, धतूरे आदि अर्पण करते हैं अर्थात् बच्चे कैसे भी लूले, लंगड़े, पापी हों, शिव बाबा उनको प्यार से स्वीकार करते हैं। भगवान की स्मृति में इतनी शक्ति है कि अजामिल जैसे पापी को भी जो अन्त में भगवान का नाम लिया तो भी स्वर्ग की प्राप्ति हो गयी। लेकिन अजामिल स्वर्ग में ऊंच पद नहीं पा सका। भगवान का नाम केवल अन्त समय में लेने से ही इतनी प्राप्ति हो गई तो हर पल, हर श्वास में उनकी याद रहे तो कितना चमत्कार हो सकता है।

नारद
(शिव पुराण)

नारद जी को भक्त श्रेणी में अग्रज माना जाता है। एक बार नारद जी ने अपनी भावनाओं तथा इच्छाओं पर विजय पाने के लिए गहन तपस्या करने का निर्णय लिया। उन्होंने एक आश्रम में आसन जमाकर तपस्या आरम्भ कर दी। मन को अशुद्ध संकल्पों से दूर कर शान्ति से ईश्वरीय याद में बैठ गये। नारद जी की इस तपस्या से इंद्र का आसन हिलने लगा। इसलिए नारद जी की तपस्या भंग करने के लिए सुन्दर अप्सराओं को भेजा गया लेकिन नारद जी अंश मात्र भी आकर्षित नहीं हुए।

जब नारद जी ने महसूस किया कि वे अपनी कामनाओं और इच्छाओं पर पूरा नियन्त्रण पा चुके हैं तब उन्होंने अपनी तपस्या को पूरा किया। तपस्या की सिद्धि से गर्वित नारद जी अपनी सिद्धियों को त्रिमूर्ति (ब्रह्मा-विष्णु-शंकर) को बताने के लिए निकले। जब वे त्रिमूर्ति से मिलकर वापस आ रहे थे तब देवताओं ने नारद जी की परीक्षा लेनी चाही। देवताओं ने नारद जी के मार्ग में स्वर्ग से भी सुन्दर, अति सुन्दर शहर रचा। नारद जी को वह शहर देखने की इच्छा हुई और वे शहर के राजमार्ग से जाने लगे। तब उन्होंने शहनाइयों की आवाज सुनी। सैनिकों से जब उन्होंने कारण पूछा तो पता चला कि राजा अपनी कन्या लक्ष्मी के स्वयंवर की तैयारी कर रहे हैं। नारद जी को देखकर राजा ने उन्हें सादर आमन्त्रित किया और कन्या को आशीर्वाद देने के लिए कहा। जब लक्ष्मी जी नारद जी से आशीर्वाद लेने के लिए आयीं तो उनकी सुन्दरता पर नारद जी मुग्ध हो गये और उन्हें वरने का संकल्प ले लिया।

उसी समय नारद जी वैकुण्ठ में विष्णु जी के पास गये और लक्ष्मी जी से विवाह करने की इच्छा प्रगट की और अनुरोध किया कि उसे हरि का रूप

प्रदान करें ताकि लक्ष्मी जी स्वयंवर में उनको ही अपने पति के रूप में स्वीकार करें। हरि शब्द के दो अर्थ हैं - हरि अर्थात् सुन्दर रूप और बन्दर का भी भाव है। इन शब्दों के जादू से विष्णु जी ने नारद जी को गले तक देवताई रूप दे दिया और मुख बन्दर का दिया। नारद जी जिनको यह पता नहीं था, बन्दर जैसा मुँह लेकर तुरन्त सभा में प्रवेश हुए। नारद जी बहुत प्रसन्न हो रहे थे कि लक्ष्मी जी जरूर उनको ही चुनेंगी। लक्ष्मी जी हाथ में माला लेकर चल रही थीं। जब वह नारद जी के निकट आयीं तो बन्दर जैसा चेहरा देख उन्हें बहुत ही आश्चर्य हुआ। नारद जी इसी सोच में थे कि अब लक्ष्मी जी उन्हीं को वरमाला पहनायेंगी। लक्ष्मी जी ने उनकी ओर से हटकर विष्णु जी को अपना वर चुना।

बहुत ही अपमानित और चिंतित हो नारद जी वहाँ से निकल पड़े और सोचने लगे कि उनमें क्या नहीं है और विष्णु जी में क्या है जो लक्ष्मी जी ने विष्णु जी को अपना वर चुना। इस प्रकार मन में विचार करते हुए नारद जी एक नदी के पास रुके और उसमें अपना चेहरा देखा। नारद जी ने अब समझा कि लक्ष्मी जी ने उन्हें क्यों नहीं वरा।

आध्यात्मिक भाव – शिव बाबा श्रेष्ठ ज्ञान प्रदान कर रहे हैं ताकि हम बच्चे भी श्री लक्ष्मी, श्री नारायण जैसा ऊंच बनें। जब बाबा पूछते हैं कि आपको सतयुगी लक्ष्मी-नारायण बनना है या त्रेतायुगी राम-सीता बनना है, तो सभी कहते हैं कि हमको तो लक्ष्मी-नारायण ही बनना है। लक्ष्य रखना ठीक है लेकिन अपने लक्षणों पर भी समय प्रति समय ध्यान देना चाहिए। नारद जी जो कि लक्ष्मी जी को वरना चाहते थे अपने बन्दर जैसे मुंह के कारण असफल रहे। इसी प्रकार हममें भी अगर बन्दर जैसे गुण अर्थात् चंचलता और अस्थिरता होगी तो हम भी सत्युग में ऊंच पद को प्राप्त नहीं कर सकते। ईश्वरीय ज्ञान-दर्पण जैसा है। हम अपने मन की अवस्था को उस दर्पण द्वारा जान सकते हैं और उन्नति पर ध्यान दे आगे बढ़ सकते हैं।

जिन्न की कहानी

एक समय एक गाँव में एक ब्राह्मण रहता था। वह वेद-पाठ, शास्त्र-अध्ययन में निपुण था। उसकी स्त्री बहुत ही सुशील और सौम्य थी। घर में सिर्फ ब्राह्मण और उसकी पत्नी ही रहते थे। इस कारण घर के पूरे काम का बोझ उसकी स्त्री पर ही पड़ता था। कुछ समय बाद काम करते-करते स्त्री थकने लगी और काम से तंग आने लगी। काम के बोझ को कम करने के लिए वह उपाय सोचने लगी। उसने अपने पति से कहा, ''आप वेदों, शास्त्रों में पण्डित हैं। कोई ऐसा यज्ञ रचिये जिससे एक काम करने वाला व्यक्ति उस यज्ञ से उत्पन्न हो। यदि कोई नौकर रखेंगे तो पूरा समय उसके पीछे रहकर काम कराना पड़ेगा। परन्तु यदि अपनी ही रचना का कोई ऐसा व्यक्ति मिले जो सारा दिन हमारे साथ रहे, सब काम करे और आज्ञाकारी भी हो तो अच्छा होगा।'' ब्राह्मण को अपने पत्नी की बात पसंद आयी और उसने इस बारे में सोचना शुरू किया।

ब्राह्मण ने अपने घर में पड़े हुए पुराने ताल पत्रों का अध्ययन करना शुरू किया। अचानक एक पत्र में उसे जिन्न को तैयार करने की यज्ञ प्रक्रिया मिली। ब्राह्मण ने खुश होकर यज्ञ आरंभ किया। कुछ समय बाद यज्ञ की अग्नि से एक जिन्न प्रकट हुआ। काम करने के लिए जिन्न को पैदा किया था इसलिए उसका नाम 'काम का जिन्न पड़ा'। जिन्न ने ब्राह्मण और उसकी पत्नी को आदर सहित प्रणाम किया और उन दोनों को अपना मालिक माना। परन्तु साथ-साथ जिन्न ने एक शर्त रखी कि उसको सदा कुछ न कुछ काम मिलते ही रहना चाहिए। यदि एक क्षण के लिए भी काम नहीं मिला तो जिन्न, ब्राह्मण को खा जायेगा। ब्राह्मण ने जिन्न की यह शर्त मान ली और सोचा कि करने के लिए काम तो बहुत है, इसलिए इसको सदा काम में व्यस्त रखने में उसे कोई

परेशानी नहीं होगी।

उसी क्षण से जिन्न ने मालिक का काम करना शुरू किया। ब्राह्मण और उसकी पत्नी बहुत प्रसन्न हुए। पर यह खुशी ज्यादा देर तक नहीं रही। जिन्न को चाहे जितना भी बड़ा काम दो एक पल में उसे पूरा कर वह ब्राह्मण के पास पुनः आकर खड़ा हो जाता और कहता कि और कोई काम है, कोई काम चाहिए, कोई काम चाहिए...।

ब्राह्मण ने जिन्न को बड़े-बड़े पतीले, बर्तन, पुराने सामान सब साफ करने के लिए कहा। ब्राह्मण ने सोचा कि यह काम करने के लिए जिन्न को एक दिन तो लगेगा और कम से कम एक दिन के लिए तो वह जिन्न से छुटकारा पा सकेगा लेकिन जिन्न ने सारा काम एक पल में ही पूरा कर लिया और फिर कहने लगा कि काम चाहिए, कोई काम दो। ब्राह्मण का घर बहुत बड़ा था सो घर को पूरा साफ करके, झाड़ू और पोछा करने के लिए कहा गया। यह काम भी जिन्न ने एक पल में पूरा कर लिया और फिर बोलने लगा कि काम चाहिए, काम चाहिए। इस बार ब्राह्मण ने सुराख वाले घड़े दिये और कुएँ से पानी भरने के लिए कहा।

ब्राह्मण को मालूम था कि यह काम भी जिन्न एक पल में कर लेगा इसलिए होशियार ब्राह्मण ने एक युक्ति रची। जब जिन्न अपना काम पूरा करके फिर से ब्राह्मण के पास आया तो उसने उसे सीढ़ी उतरने और चढ़ने की आज्ञा दी। अब जिन्न सीढ़ी चढ़ने और उतरने में व्यस्त हो गया। जब तक ब्राह्मण बुलाएगा नहीं तब तक जिन्न वही काम करता रहेगा। जब जरूरत पड़ेगी तब उसे बुलाया जायेगा और काम करने की आज्ञा दी जायेगी। इस तरह से ब्राह्मण ने युक्ति से मुक्ति पा ली और जिन्न को व्यस्त कर दिया।

आध्यात्मिक भाव – माया जिन्न के समान है। एक राजयोगी को निरन्तर ज्ञान-योग की कमाई में मगन रहना चाहिए नहीं तो माया जिन्न राजयोगी को खा जायेगी। बाबा हमको काम देते हैं कि बाप और वर्से को याद करते रहो। ब्रह्माकुमार और कुमारियों को सदा जिन्न की तरह अथक बनकर ईश्वरीय मार्ग पर चलते रहना है।

अल्लाह अवलदीन और जादू का चिराग

(सहस्र रजनी चरित्र)

अवलदीन और उसकी माँ बहुत निर्धन थे। उनलका निर्वाह बहुत कठिनाई से होता था। कभी-कभी तो उनके पास दो वक्त कीी रोटी तक का जुगाड़ भी नहीं हो पाता था। एक दिन अवलदीन, दिनभर काम त ढूँढता रहा परन्तु उसे कोई काम नहीं मिला। शाम को थककर जब वह घर पहुंहुंचा तब माँ ने उसे बताया कि घर में अब चावल-दाल थोड़ा ही बचा है। दोनों ं चिंता में पड़ गये कि कल भी काम नहीं मिला तो निर्वाह कैसे होगा। तभी दरवाज़ा खटखटाने की आवाज़ आयी। दोनों चौंक पड़े कि कहीं कोई अथिति न हंहो। अवलदीन ने दरवाजा खोला तो सामने एक वृद्ध व्यक्ति को खड़े पाया। वृबृद्ध ने पूछा, ''क्या मुस्तफा दरज़ी का घर यही है?'' अवलदीन ने कहा, ''जी ा हाँ, आप कौन हैं?'' ''मैं तुम्हारे पिता का भाई हूँ। कई वर्ष पहले मैं विदेश चचला गया था, अभी-अभी लौट रहा हूँ। तुम्हारे पिता कहाँ हैं?'' वृद्ध ने पूछा।।

अवलदीन की माँ ने उत्तर दिया, ''उनकी मौतत को तो कई वर्ष हो गए। बस, यही एक बेटा है। घर की हालत भी बहुत खराराब है।''

वृद्ध ने कहा,''अब चिंता की कोई बात नहीं। बेबेटा अवलदीन, यह लो पैसे और बाज़ार से कुछ खाने को ले आओ''। उस रातात सबने पेट भरकर खाना खाया। सोने से पहले परस्पर बातचीत करते हुए मुस्त्तफा के भाई ने कहा कि मैं पर्याप्त धन कमाकर आया हूँ और आपके साथ ह ही रहूँगा। हाँ, कल प्रात: अवलदीन को कुछ काम से बाहर ले जाऊंगा। हम ल्लोग संध्या होने से पहले ही लौट आयेंगे।

वास्तव में वह मुस्तफा का भाई नहीं था, एक र जादूगर था। प्रात: होने पर

वह अवलदीन को लेकर शहर से बाहर एक जंगल में पहुँचा। वहाँ एक गुफा थी जिसका मुँह एक भारी पत्थर से बंद था। दोनों ने मिलकर पत्थर को हटाया। वृद्ध ने भीतर एक रास्ता दिखाते हुए कहा, ''नीचे उतरकर सीधे अन्दर चले जाओ। वहाँ एक दीपक पड़ा होगा, उसे उठा लाना।''"

अवलदीन गुफा के भीतर चला गया। भीतर एक कोठरी थी जिसमें घुसते ही उसकी आँखें चौंधिया गईं। वह आश्चर्यचकित हो इधर-उधर देखने लगा। कोठरी हीरे-मोती और तरह-तरह के रत्नों से भरी हुई थी। अवलदीन ने उनमें से कुछ रत्न उठाकर जेबें भर लीं और कुछ अपनी झोली में डाल लिए। इतने में उसे अपने चाचा की आवाज़ सुनाई दी, ''जल्दी से दीपक मुझे पकड़ा दो।'' अब अवलदीन का ध्यान दीपक की ओर गया। वहीं कोने में एक पुराना दीपक पड़ा था जिस पर धूल जमी हुई थी। अवलदीन ने दीपक उठाया और गुफा के द्वार पर पहुँचा।

''चाचा जी, मेरा हाथ पकड़कर मुझे ऊपर खींच लीजिए'' उसने कहा। ''पहले दीपक मुझे पकड़ा दो'' वृद्ध ने कहा। अवलदीन अपनी बात पर डटा रहा और जादूगर अपनी बात पर। इस तरह कुछ समय बीत गया तो जादूगर क्रोधित होकर बोला, अच्छा, तो फिर यहीं रहो। उसने गुफा के मुँह पर भारी पत्थर रख दिया और स्वयं वहाँ से चला गया। अवलदीन बहुत चिल्लाया परन्तु किसी ने उसकी आवाज़ नहीं सुनी। थककर वह ज़मीन पर बैठ गया। उसके हाथ में दीपक था। दीपक को किसी तरह रगड़ लग गई और एक जिन्न उसके सामने प्रकट हो गया।

अवलदीन भय से काँपने लगा। इतने में ऊंची आवाज़ में वह जिन्न बोला, बोलिये मालिक, क्या आज्ञा है? अवलदीन ने कांपते स्वर में पूछा, ''तुम कौन हो?'' जिन्न ने उत्तर दिया, ''मैं इस दीपक का सेवक हूँ। जिसके पास यह दीपक रहता है वही मेरा स्वामी होता है।''

अब अवलदीन की जान में जान आई। वह बोला, ''मुझे मेरे घर पहुँचा दो।'' जिन्न ने पलक झपकते ही अवलदीन को उसके घर पहुँचा दिया। अवलदीन ने जिन्न से कहकर एक बहुत बड़ा महल बनवाया और अपनी माँ के साथ उसमें सुख से रहने लगा।

आध्यात्मिक भाव – अल्लाह अवलदीन - अल्लाह माना शिव बाबा और अवलदीन माना आदि सनातन देवी-देवता धर्म। जैसे दिखाते हैं कि ठका करने से अवलदीन को राजाई मिल गई, ऐसे ही हम जब शिव बाबा को याद करते हैं तो शिव बाबा हमें सेकेण्ड में वैकुण्ठ का मालिक बना देते हैं।

पण्डित की कहानी

एक पण्डित एक नदी किनारे रहता था। वह इतना ज्ञानी था कि दूर और पास के कई पण्डित उससे सलाह लेने आते थे। वे पण्डित पर आदर और सम्मान की वर्षा करते थे। दूसरे किनारे पर एक लक्ष्मी नाम की दूध वाली रहती थी जो पण्डित को दूध बेचती थी। उसका दिन व्यस्त रहता था। वह सुबह जल्दी उठकर दूध निकालती, अपने वृद्ध पिता के लिये भोजन पकाती और उसके बाद दूध बाँटने बाहर निकल पड़ती। उसे एक नाव पर नदी पार करनी पड़ती थी। एक दिन पण्डित उसका इन्तज़ार कर रहा था। आखिर वह आई तब वह बोला – आह, लक्ष्मी, तुम अन्त में आ ही गई। मैं तुम्हारा प्रातःकाल से ही इन्तज़ार कर रहा था। मुझे कल से दूध सूर्योदय से पहले चाहिए। अगली सुबह लक्ष्मी भोर शुरू होते ही किनारे दौड़ी लेकिन नाव वाला देर सुबह तक नहीं आया। लक्ष्मी ने नाव वाले से जल्दी करने का आग्रह किया क्योंकि उसे जानकारी थी कि पण्डित दूध के लिए इन्तज़ार कर रहा होगा। पहुँचने पर पण्डित ने शिकायत की कि तुम दुबारा देर से आई, क्या हुआ। लक्ष्मी माफी माँगते हुए बोली कि पण्डित जी, नाव वाला देर से आया। उस दिन पण्डित का मिजाज़ खराब था। वह चिल्लाया – बहाना मत सुनाओ। तुमने मेरी इच्छा का अनादर करने की हिम्मत कैसे की? तुम्हें नहीं मालूम कि मैं कितना महान हूँ? लक्ष्मी ने रोना शुरू किया लेकिन पण्डित शेखी बघारता रहा। क्या तुम जानती हो मैं कितना विद्वान हूँ? तुम केवल एक दूध वाली हो, मैं बहुत सारी चीज़ें जानता हूँ। वह नदी जीवन की नदी है, लोग हरि का नाम लेकर पार कर लेते हैं।

लक्ष्मी ने पण्डित के शब्दों को बहुत गंभीरता से लिया और अगले दिन समय पर आने का वादा कर वहाँ से चली गयी। उसने सोचा कि मैं तो पण्डित जी के कहे अनुसार हरि का नाम लेकर नदी पार कर सकती हूँ। यह बात

पण्डित जी ने पहले क्यों नहीं कही। अगले दिन लक्ष्मी, पण्डित के घर सूर्योदय से पहले पहुँच गयी। पण्डित उसे देखकर आश्चर्यचकित था क्योंकि उसने नाव वाले को तो देखा ही नहीं। पण्डित जी ने पूछा, आज तुमने नदी कैसे पार की। लक्ष्मी मुस्कराई और बोली, आपही ने तो मुझे रास्ता बताया था कि हरि का नाम लो और नदी पार कर लो, तो मैंने वैसा ही किया। ''यह असम्भव है'', पण्डित चिल्लाया और उसे फिर से नदी पार करने के लिये कहा। लक्ष्मी ने दुबारा बगैर किसी मुश्किल के हरि का नाम गाते हुए नदी पार कर ली। ऐसा करते हुए भी वह बिल्कुल सूखी थी। पण्डित ने हरि का नाम लेकर यही करने की कोशिश की लेकिन उसने जैसे ही अपने कपड़े भीगने से बचाने की कोशिश की वह नदी में गिर पड़ा। लक्ष्मी चकित थी। बह बोली, वाह पण्डित जी, आप हरि का बिल्कुल चिन्तन नहीं कर रहे थे। आप तो अपनी धोती के बारे में सोचने में व्यस्त थे इसलिए काम नहीं बना। पण्डित, लक्ष्मी की सच्ची भक्ति से आश्चर्यचकित हो गया और उसने माना कि उसका विश्वास, उसके अपने खाली ज्ञान से ज्यादा शक्तिशाली था। उसने सच्चाई से लक्ष्मी को आशीर्वाद दिया।

आध्यात्मिक भाव – शिव बाबा उन लोगों को पण्डित कहते हैं जो ज्ञान को केवल दोहराते रहते हैं लेकिन जीवन में नहीं उतारते। हमें पण्डित की तरह नहीं होना चाहिए। दूसरों को जो कहते हैं पहले खुद वैसा बनना चाहिए। कथनी और करनी में फर्क नहीं होना चाहिए।

मोहजीत राजा की कथा

एक बार एक राजकुमार अपने कई सैनिकों के साथ शिकार पर गया। वह बहुत अच्छा शिकारी था। शिकार के पीछे वह इतना दूर निकल गया कि सारे सिपाही पीछे छूट गये। अकेले पड़ने का एहसास होते ही वह रुक गया। उसे प्यास भी लग रही थी। उसे पास में ही एक कुटिया दिखाई दी। वहाँ एक सन्त ध्यान-मग्न होकर बैठे थे। राजकुमार ने संत के पास जाकर पानी माँगा। सन्त ने राजकुमार का परिचय पूछा। राजकुमार ने सन्त से कहा कि वह एक राजा का लड़का है जिसने मोह को जीत लिया है। सन्त बोला – असंभव। एक राजा और मोह पर विजयी? यहाँ मैं एक संन्यासी हूँ तब भी मोह को जीत नहीं पा रहा हूँ और तुम कहते हो कि तुम्हारे पिता जी एक राजा हैं और मोह को जीत चुके हैं। राजकुमार ने कहा, न केवल मेरे पिता जी बल्कि सारी प्रजा ने भी मोह को जीत रखा है। सन्त को इसका विश्वास नहीं हुआ तो राजकुमार ने कहा कि आप चाहें तो इस बात की परीक्षा ले लें। सन्त ने राजकुमार की कमीज़ माँगी और उसे कुछ और पहनने को दिया। सन्त ने तब एक जानवर को मार कर उसके खून में राजकुमार की कमीज़ को डुबोया और वह शहर में चिल्लाता हुआ गया कि राजकुमार को एक शेर ने मार दिया। शहर के लोग कहने लगे – अगर वह चला गया तो क्या हुआ। आप क्यों चिल्ला रहे हो? वह उसका भाग्य था। सन्त ने सोचा कि प्रजा नहीं चाहती होगी कि राजकुमार भविष्य में राजा बने इसलिए इस तरह की प्रतिक्रिया व्यक्त कर रही है। सन्त महल में गया और राजकुमार की मौत की बात उसके भाई और बहन को सुनाई। उन्होंने कहा कि अब तक वह हमारा भाई था, अब किसी और का भाई बन जायेगा। कोई हमेशा के लिए साथ तो नहीं रह सकता इसलिए रोने और चिल्लाने की आवश्यकता नहीं है। सन्त को लगा कि बहन को दूसरा भाई अधिक पसंद है और भाई

खुश है कि उसे अब राज्य मिलेगा इसलिए दोनों ने ऐसी प्रतिक्रिया व्यक्त की। फिर वह पिता के पास गया और खबर सुनाई। पिता बोले, आत्मा तो अमर और अविनाशी है इसलिए चिल्लाने की कोई जरूरत नहीं है। वह मेरा पुत्र था इसलिए मैंने सोचा कि वह राजा बनने वाला है लेकिन अब दूसरे पुत्र को राज्य मिलेगा। मैं उसे वापस नहीं ला सकता हूँ इसलिए दुःख क्यों करूँ। सन्त सोच में पड़ गया। लेकिन अभी और भी दो लोग बाकी थे। राजकुमार की माता और पत्नी। सन्त ने सोचा कि ये दो व्यक्ति तो जरूर व्याकुल होंगे। लेकिन वहाँ से भी वैसा ही उत्तर पाकर सन्त आश्चर्य में पड़ गया। उसे अपने आप पर ही विश्वास नहीं हो रहा था कि वह सच देख रहा है। आखिर हारकर उसने अपने आने का उद्देश्य और राजकुमार के जिन्दा होने की बात सबको सुना दी। राजकुमार ने वापस आकर अपना राज्यभाग्य सँभाला और हर चीज़ पहले की तरह चलती रही।

आध्यात्मिक भाव – मोह पाँच विकारों में से एक है। वह हमारी शान्ति को छीन लेता है। परखने की शक्ति को खत्म कर देता है। मोह सच्चाई को खत्म करता है। जिसमें मोह है उसमें बुद्धिमानी नहीं हो सकती। बाबा इस कथा से शिक्षा देना चाहते हैं कि ना हमें दूसरों में मोह हो और ना ही दूसरों का हममें मोह हो। तब ही हम विश्व के मालिक बन सकते हैं।

अष्टावक्र
(आदि ग्रंथ)

एक बार राजा जनक ने चाहा कि मैं आध्यात्मिक ज्ञान प्राप्त करूँ। यह सोचकर उन्होंने एक हजार गायें मंगवाई और हर एक गाय के सींग पर बीस-बीस मोहरें बंधवा दी और हुक्म दिया कि जो व्यक्ति शास्त्रार्थ में जीत जाये, वही ये गायें ले जाये। एक महीने तक वाद-विवाद होता रहा। आखिर याज्ञवल्क्य सब ऋषियों में अव्वल निकले और एक हजार गायें मोहरों समेत ले गये।

राजा ने कहा कि मैं इसी तरह एक हजार गायें उसको भी दूँगा जो मुझे आत्म-ज्ञान करवा दे। याज्ञवल्क्य वाचक ज्ञानी थे। वाचक ज्ञान के सब सिद्धान्त उन्होंने समझा दिये मगर आत्मा का ज्ञान न करवा सके, अन्दर की ओर न ले जा सके। आखिर राजा ने एक सिंहासन बनवा दिया और कहा कि जो भी मुझे ज्ञान दे सके वह इस सिंहासन पर आकर बैठ जाये। इसके बाद उन्होंने मुल्क के सारे महात्मा बुलाये और कहा कि मैं उतनी ही देर में ज्ञान प्राप्त करना चाहता हूँ जितनी देर घोड़े पर सवार होने में लगती है। ऋषियों ने सोचा कि ज्ञान कोई ऐसी चीज तो नहीं जो घोलकर पिलाया जा सके। पहले कुछ लिखायें, पढ़ायें, अभ्यास करायें तब धीरे-धीरे कुछ ज्ञान प्राप्त हो। इतने में अष्टावक्र जी आ गये और सिंहासन पर जाकर बैठ गये। उन्होंने सोचा कि अगर राजा को ज्ञान न हुआ तो महात्माओं के गुट को लज्जा से सिर झुकाना पड़ेगा। उन्हें देखकर सभी हँस पड़े। इस पर अष्टावक्र ने कहा कि "मैं तो समझा था कि यह महात्माओं की सभा है लेकिन नहीं, ये तो आत्मा को नहीं देखते, शरीर को देखते हैं और चमड़ी को देखना तो चमारों का काम है।" उनकी यह बात सुनकर सभी चुप हो गये।

ऋषि ने पूछा कि ''राजा तू ज्ञान लेना चाहता है?'' राजा ने कहा, ''इतना सब कुछ मैं ज्ञान प्राप्ति की लालसा से ही कर रहा हूँ।'' इस पर अष्टावक्र ने कहा कि ''ज्ञान तो तुम्हें मिलेगा परंतु तुम्हें कुछ दक्षिणा भी देनी होगी।'' राजा ने कहा, ''जो मेरे बस में है उसे मैं अवश्य दूँगा।'' अष्टावक्र ने कहा, ''तो राजा मैं तीन चीज़ें माँगता हूँ। मुझे तुम्हारा तन-मन और धन चाहिए।'' राजा ने थोड़ी देर सोचकर कहा कि ''मैंने दे दिया''। ''फिर सोच लो'' – अष्टावक्र ने कहा। ''जी मैंने सोच लिया''–राजा ने कहा। ''तो करो संकल्प'' – अष्टावक्र ने कहा। राजा ने संकल्प किया। उन दिनों रिवाज़ था पानी का चुल्लू भरकर संकल्प लेने का।

अब अष्टावक्र ने राजा से कहा, ''देख राजा, तू मुझे तन, मन, धन दे चुका है। इसका मालिक अब मैं हूँ, तू नहीं। तो मैं हुक्म करता हूँ कि तुम सबके जूतों में बैठ जाओ।'' दरबार में एकदम सन्नाटा छा गया। सब चुप हो गये। अपनी प्रजा, दरबारी सबके सामने जूतों में जाकर बैठना! मगर राजा जनक समझदार थे। ज़रा भी न झुँझलाये। चुपचाप जूतियों में जाकर बैठ गये। अष्टावक्र ने ऐसा इसलिए किया कि राजा से लोक-लाज छूट जाये। लोक-लाज बड़ी रुकावट है। बड़े-बड़े लोग यहाँ आकर रुक जाते हैं।

फिर अष्टावक्र ने कहा कि यह धन मेरा है। मेरे धन में मन न लगाना। राजा का ध्यान औरतों की ओर जाता फिर वापस आ जाता कि नहीं, यह तो सब अब ऋषि का हो चुका है। राज्य, धन की ओर राजा का मन बार-बार जाता और वापस आ जाता कि नहीं यह तो अब सब ऋषि का है। मन की आदत है, वह बेकार और चुप नहीं बैठता, कुछ न कुछ सोचता ही रहता है। राजा के मन का यह खेल ऋषि देख रहा था। आखिर राजा आँखें बंद करके बैठ गया कि मैं बाहर न देखूँ, न मेरा मन वैभवों में भागे। ऋषि यही चाहता था। अपना मतलब पूरा होता देख ऋषि ने पूछा, ''तू कहाँ है?'' राजा बोला, ''मैं यहाँ

हूँ।'' इस पर ऋषि ने कहा, ''तू मुझे मन भी दे चुका है, खबरदार जो उसमें कोई ख्याल उठाया तो''। राजा समझदार था, समझ गया कि अब मेरा अपने मन पर भी कोई अधिकार नहीं है। समझने की देर थी कि मन रुक गया। जब ख्याल बन्द हुआ तो अष्टावक्र ने अपनी अनुग्रह दृष्टि दे दी। रूह अन्दर की यात्रा पर चल पड़ी रूहानी मँजिल की सैर करने। अष्टावक्र ने अन्य ऋषियों को कहा कि अब राजा को बुलाओ। अब बुलाये कौन? ऋषि ने जितनी देर मुनासिब समझा राजा को अन्तर का आनन्द लेने दिया। आखिर में उसे नीचे लाया गया। जब राजा ने आँखें खोली तो अष्टावक्र ने पूछा – ''क्या तुम्हें ज्ञान हो गया।'' ''जी हो गया'', राजा ने जवाब दिया। ''कोई शक तो नहीं रहा'' – अष्टावक्र ने पूछा। ''जी नहीं'', राजा ने उत्तर दिया। तब अष्टावक्र ने कहा – ''मैं यह तन, मन, धन तुम्हें प्रसाद के तौर पर वापस देता हूँ, इसे अपना न समझना। अब तुम राज्य भी करो और भजन भी करो।'' इस तरह अष्टावक्र ने राजा जनक को एक सेकण्ड में मुक्ति और जीवनमुक्ति पाने की विधि बताई और ज्ञान दिया।

आध्यात्मिक भाव – जीवनमुक्त स्थिति माना जीते जी सब आकर्षण, बन्धन, वैभवों के प्रभाव से मुक्त रहना। इसका मतलब यह नहीं कि सब कुछ छोड़कर सभी से दूर रहना परन्तु सबके बीच रहते हुए, सभी जिम्मेवारियों को निभाते हुए भी किसी भी बन्धन में नहीं फँसना, सुख और दु:ख के बन्धन में भी नहीं फँसना – यही सच्ची जीवनमुक्त स्थिति है जो शिव बाबा सिखाते हैं।

गुलबकावली
(जानपद कथा)

गुलबकावली एक काल्पनिक, विशेष स्वर्णिम पुष्प है जो कि पूर्णिमा के दिन देवलोक की स्वर्णिम झील में पूर्णतया खिलता है। यह बहुत ही सुन्दर और सुगन्धित होता है। इन्द्रदेव की पुत्री, बकावली के पुष्पों से जगदम्बा को अलंकृत करती हैं। इस पुष्प की विशेषता यह है कि अन्धे व्यक्ति की आँख को इसे लगाने से उसे पुन: दृष्टि प्राप्त हो जाती है। मनुष्य लोक में एक बार शिव-भक्त राजा प्रचण्ड के पुत्र ने देवलोक से यह पुष्प लाकर अपने पिता की आँखों पर रखा तो उन्हें खोई हुई दृष्टि पुन: प्राप्त हो गयी।

अवन्तीनगर का राजा प्रचण्ड और महारानी प्रतिदिन शिव भगवान का अभिषेक कर राज्य संचालन करते थे। उनके राज्य में प्रजा सुखी थी। कई वर्षों तक सन्तान न होने के कारण राजा ने रूपवती नामक कन्या से पुन: विवाह किया जिससे तीन पुत्रों का जन्म हुआ। ये तीनों पुत्र मूर्ख और बुद्धिहीन थे। प्रथम रानी सन्तान प्राप्ति के लिए शिव आराधना में ही व्यस्त रहने लगी। कुछ दिनों पश्चात् उसने एक पुत्र को जन्म दिया जिसका नाम विजय रखा गया।

द्वितीय रानी को ईर्ष्या होने लगी क्योंकि प्रथम रानी के पुत्र विजय के कारण उसके लड़कों को राज्य-अधिकार प्राप्ति की सम्भावना नहीं थी। इसलिए द्वितीय रानी ने अपने भाई वक्रकेतु के साथ मिलकर एक योजना बनाई। उसने ज्योतिषियों के द्वारा राजा को बहकाया कि विजय को राज्य से बाहर छोड़ दिया जाये। यदि नहीं छोड़ा गया तो उसके रहने से राजा नेत्रहीन हो जायेंगे। ज्योतिषियों के आदेश को मानकर राजा ने सिपाहियों को आदेश दिया कि विजय को न केवल जंगल में छोड़कर आयें बल्कि उसे खत्म कर दें। सिपाहियों ने जंगल में विजय को मारने के लिए तलवार निकाली तो तलवार पुष्पहार बन गयी। पैरों से

कुचलकर मारना चाहा तो पैर शक्तिहीन हो गये। अन्त में शिव जी ने एक मुनि के रूप में आकर विजय को एक गड़रिये के हाथ सौंप दिया व उसकी पालना करने का आदेश दिया। दिन-प्रतिदिन विजय बुद्धिमान एवं चतुर होने लगा एवं सर्व विद्याओं में निपुण हो गया।

उधर राजभवन में वक्रकेतू ने योजना बनाई कि किसी भी तरह राजा को अन्धा बनाकर स्वयं राज्य करे। इस योजना को क्रियान्वित करने के लिए उसने राजा को, शिकार करने के लिए जंगल जाते समय दूध में एक तरह की दवा मिलाकर पिला दी। धीरे-धीरे राजा की दृष्टि कम होती गई और ठीक उसी समय जब वह पूरा अन्धा होने वाला था, उसको सामने विजय दिखाई दिया। इसके तुरन्त बाद ही राजा अन्धा हो गया। राजा ने विजय को पहचान लिया कि यही उसका बेटा है। विजय को भी माँ द्वारा सम्पूर्ण रहस्य मालूम हुआ।

एक बार विजय अपने माता-पिता से मिलने जब छिपकर महल में पहुँचा तो वहीं उसे मालूम हुआ कि देवलोक से गुलबकावली पुष्प लाकर पिता की आँखों पर रखने से उन्हें पुनः दृष्टि प्राप्त हो सकती है। विजय ने गुलबकावली पुष्प लाने के लिए प्रस्थान किया।

रास्ते में एक शहर में युक्तिमति नामक एक युवती रहती थी। वो बहुत लोगों को जुए के खेल में हराकर अपने पास बन्दी बनाकर रखती थी। शर्त यह थी कि जो उसे हरायेगा युक्तिमति उसी से शादी करेगी। वास्तव में वह अपनी युक्ति से ही खेल में जीत पाती थी। इस खेल के बीच में एक बिल्ली के सिर पर दीपक रख उसके आगे चूहा छोड़ा जाता था जिसे पकड़ने के प्रयास में बिल्ली दौड़ती थी तो दीपक नीचे गिर जाता था एवं अंधेरा हो जाता था। अंधेरे में वह युवती खेल को अपने पक्ष में कर सभी को हराती थी। विजय ने युक्तिमति की यह युक्ति पहचानकर उससे खेलने के लिए एक बूढ़े व्यक्ति के वेष में जाकर उसे हरा दिया और शर्त के अनुसार उससे विवाह कर लिया।

विजय, गुलबकावली का फूल लाने के लिए पूर्णिमा के दिन देवलोक पहुँचा। वहाँ स्वर्णिम झील में खिले हुए गुलबकावली के पुष्प उसे दिखाई दिये। उन पुष्पों को मनुष्य लोक तक लाने हेतु विजय को अनेक विघ्नों का सामना करना पड़ा। अन्त में विजय ने पुष्प को पिता की आँखों पर रख उन्हें पुन: दृष्टि प्राप्त करायी एवं राजद्रोही वक्रकेतु का संहार किया। विजय का युवराज के रूप में राज्य दरबार में अभिषेक हुआ।

आध्यात्मिक भाव – जैसे अन्धे व्यक्ति को गुलबकावली पुष्प द्वारा दृष्टि प्राप्त होने का प्रसंग कहानी में स्पष्ट किया गया है वैसे ही वर्तमान समय चारों ओर व्याप्त अज्ञान अंधकार एवं विकारों के वशीभूत हुए ज्ञान नेत्रहीन मानव को पुन: शिव बाबा परमधाम से आकर ज्ञान प्रकाश रूपी पुष्पों द्वारा ज्ञान का तीसरा नेत्र प्रदान कर रहे हैं। जैसे राजकुमार को गुलबकावली पुष्प लाने के लिए अनेक विघ्नों का सामना करना पड़ा वैसे ही आत्मायें जब ज्ञानमार्ग पर चलती हैं तो पांच विकारों रूपी माया बिल्ली अनेक प्रकार के विघ्न डालती है तथा सम्पूर्ण ज्ञानी और योगी बनने नहीं देती परन्तु निर्भयतापूर्वक विघ्नों का सामना कर एक शिव बाबा पर दृढ़ निश्चय रख आगे बढ़ने वाले स्वत:ही ज्ञान नेत्र प्राप्त कर अन्य आत्माओं को भी नेत्र प्रदान कराते हैं। उपर्युक्त कहानी में जैसा कि कहा गया है कि खेल के बीच में बिल्ली के हस्तक्षेप के कारण कई व्यक्ति हार गये वैसे ही ज्ञानमार्ग में माया रूपी बिल्ली भी आत्मा की ज्योति बुझाकर निर्णय-शक्ति को समाप्त कर देती है। माया के प्रभाव को समझकर विजयी बनने वाले ही बुद्धिवान, ज्ञानी और योगी आत्मायें हैं। जैसे राजकुमार ने राजद्रोही का संहार कर युवराज पद प्राप्त किया वैसे ही हमें भी शिवशक्ति बन माया का संहार कर शिव बाबा से स्वर्ग के राज्य का अधिकार लेना है।

भगीरथ
(ब्रह्माण्ड पुराण)

भारत देश में गंगाजल को पवित्र एवं पापनाशक मान कर पीते हैं और गंगा नदी में स्नान भी करते हैं। प्राचीन समय में यह गंगा नदी भूलोक पर नहीं थी बल्कि देवलोक में थी। गंगा नदी की उत्पत्ति हिमालय पर्वत पर होने से इसे हिमालय की बेटी भी मानते हैं। भगीरथ के अथक प्रयास के पश्चात् यह गंगा भूलोक पर आयी।

सूर्यवंश के सगर राजा अंशुमन्त के पुत्र दिलीप को भगीरथ के नाम से एक पुत्र था। भगीरथ के प्रपितामह जो कि साठ हजार राजकुमार थे, कपिल महामुनि के क्रोध से भस्म हो चुके थे। भगीरथ को यह ज्ञात हुआ कि यदि प्रपितामहों की भस्म पर गंगाजल प्रवाहित किया जाए तो उन्हें सद्गति प्राप्त हो सकती है। भगीरथ ने अपना राज्य एवं परिवार छोड़ अपने पूर्वजों की सद्गति हेतु गंगा को भूलोक पर लाने के लिए एक पैर पर खड़े रहकर तपस्या करनी प्रारंभ कर दी। गंगा ने भूलोक पर आने के आह्वान को एक शर्त पर स्वीकार किया कि उसके तीव्र वेग को धारण करने वाले की व्यवस्था की जाए। यह क्षमता केवल रुद्र में ही थी। इस रहस्य को जानकर भगीरथ ने तपस्या की और रुद्र भगवान को प्रसन्न किया। इसके फलस्वरूप गंगा ने बड़ी शान से भूलोक पर आना प्रारंभ किया। रुद्र ने अपनी जटाओं से गंगा को रोक लिया जिस कारण पुनः भगीरथ ने रुद्र से प्रार्थना की और रुद्र ने अपनी जटाओं से गंगा को प्रवाहित किया। भगीरथ ने गंगा को भूलोक से पाताल लोक ले जाकर वहाँ अपने पूर्वजों की भस्म पर प्रवाहित किया जिससे उन्हों को सद्गति प्राप्त हुई। इसलिए गंगा को भागीरथी भी कहा जाता है।

आध्यात्मिक भाव – गंगा हिमालय पर्वत से आरंभ होकर विभिन्न पर्वतों से होती हुई आती है जिस कारण अनेक जड़ी-बूटियों के औषधीय गुण भी गंगाजल में समाहित होते हैं। इसलिए इस नदी का पानी शुद्ध होता है। उससे शरीर के रोग मिटने में सहयोग मिलता है। इसी तरह ज्ञान रूपी गंगा में डुबकी लगाने से अर्थात् ज्ञान को धारण करने से आत्मा पावन बन जाती है। भूलोक पर माया के वश श्रापित पतित जीवात्माओं की सद्गति हेतु परमधाम निवासी परमात्मा शिव ब्रह्मातन का आधार ले ज्ञान-गंगा प्रवाहित करते हैं। इस महान कर्त्तव्य में परमात्मा शिव जिन्हें रुद्र भी कहते हैं ब्रह्मातन को अपना माध्यम बनाते हैं। इसलिए ब्रह्मा को भागीरथ अथवा भाग्यशाली रथ भी कहते हैं।

रानी का हार

एक राज्य की रानी की यह खासियत थी कि उसके गले में सदैव एक हार रहता था जिसको वह केवल स्नान करते समय ही निकाल कर बाहर रखती थी। एक दिन स्नान करने के पश्चात् उसने हार के लिए हाथ बढ़ाया तो रोज़ की जगह पर हार नहीं मिला। हार को न पाकर रानी परेशान हो गयी। उसने सोचा कि रोज़ तो वह यहीं पर हार रखती थी और आज कहाँ चला गया। कहीं कोई उसे उठाकर तो नहीं ले गया। उसने तुरन्त सिपाहियों को बुलाकर हार ढूँढने का आदेश दिया। सिपाहियों ने, रानी की दासियों ने तथा राजभवन में रहने वाले अन्य कर्मचारियों ने चारों ओर हार ढूंढने का प्रयास किया। शाम होने पर भी किसी को हार नहीं दिखाई दिया। रानी ने समझा कि हार खो गया और वह निराश हो गई। उस समय राजभवन में रहने वाली एक बुढ़िया रानी के पास आई तथा उसने रानी से निराश होने का कारण पूछा। रानी ने कारण बताया। तब बुढ़िया ने कहा कि आपका हार तो आपके गले में ही है। वास्तव में उस दिन स्नान करते समय रानी गले से हार निकालकर रखना भूल गयी थी। इसलिए स्नान के पश्चात् निश्चित स्थान पर उसे हार नहीं मिला। गले में ही हार होते हुए भी रानी ने उसके लिए सारे शहर में खोज की।

आध्यात्मिक भाव – जैसे रानी ने गले में हार रखकर सारा शहर ढूँढा वैसे ही ज़ीव आत्मायें माया अर्थात् विकारों के वशीभूत हो, शान्ति को प्राप्त करने के लिए विभिन्न प्रयास कर रहीं हैं, विभिन्न स्थानों पर भटक रही हैं, घर-बार छोड़ जंगलों में रह रही हैं परन्तु फिर भी शान्ति प्राप्त करने में असफल ही हैं। शान्ति किसी स्थान पर या बाज़ार में उपलब्ध होने वाली स्थूल वस्तु नहीं है, न ही किसी पदार्थ में, धन में वा किसी वैभव में शान्ति है। वास्तव में आत्मा का स्वधर्म शान्ति है जिसकी अनुभूति स्वयं को देह से भिन्न आत्मिक

स्वरूप में स्थित करने से होती है। आत्मा है ही शान्त स्वरूप। शान्ति है ही आत्मा का अनादि एवं अविनाशी गुण। आवश्यकता है केवल मन को आत्मिक स्वरूप में स्थित करने की, मानसिक एकाग्रता की। इस सहज विधि द्वारा आत्मा स्वयं को शान्ति रूपी अविनाशी खज़ाने से सम्पन्न बना सकती है।

शेर आया शेर .....।

एक गाँव में एक गरीब व्यक्ति था जिसको एक लड़का था। गाँव के समीप ही एक जंगल था जिसमें से लकड़ी काटकर वह बेचता था। उसी से उसके परिवार का और उसका गुज़र-बसर चलता था। लड़का भी प्रतिदिन अपने पिता के साथ जंगल में जाता था। गाँव के अन्य लोग भी जंगल में लकड़ी काटने आते थे।

एक दिन लकड़ी काटते समय लड़के को कुछ मज़ाक करने की सूझी। उसने अचानक 'शेर-शेर....' कह ऊंचे स्वर में आवाज लगाना शुरू कर दिया। उसकी आवाज सुनकर सभी लकड़हारे घबरा गये और उस लड़के के पास इकट्ठे हो गये। लड़के ने सबको घबराया हुआ देखकर पहले तो खूब मजा लिया और फिर हँसते हुए कहा कि मैंने तो मज़ाक किया था। यह सुन सभी पुन: अपने-अपने काम में लग गये। दूसरे दिन लड़के ने फिर शरारत की और जोर से 'शेर आया, शेर आया...' कहकर आवाज लगाई। सभी फिर से उसके पास दौड़कर आये। देखा तो आज भी लड़के ने मज़ाक ही किया था।

तीसरे दिन सचमुच एक बड़ा शेर, बकरियों के झुंड के लालच में आ गया। सच्चे शेर को देखकर लड़के के तो होश ही उड़ गये। भयभीत होकर वह जोर-जोर से चिल्लाने लगा 'शेर-शेर ...'। इस बार किसी ने भी उसकी पुकार पर विश्वास नहीं किया। सभी ने समझा कि लड़का अभी भी मजाक ही कर रहा होगा। और कोई भी उसकी मदद के लिए नहीं आया। जब उन्हें पता चला कि आज सचमुच शेर आया है तो वे सभी दौड़कर लड़के के पास पहुंचे परन्तु तब तक तो देर हो चुकी थी। लड़का बुरी तरह से घायल हो चुका था।

आध्यात्मिक भाव – इस कहानी में यह शिक्षा दी गयी है कि झूठ बोलना कितना खतरनाक हो सकता है। लेकिन बाबा इस कहानी का मिसाल

देकर एक चेतावनी प्रस्तुत करते हैं। बाबा के बच्चे दुनिया वालों को बार-बार यह चेतावनी देते हैं कि अब विनाश हुआ कि हुआ। परन्तु ''कितने ही समय से विनाश की बात सुनते आ रहे हैं लेकिन विनाश तो होता ही नहीं है'', यह समझकर दुनिया वाले गाफिल और अलबेले हो जाते हैं और जब सचमुच विनाश होगा तब ज्ञान-योग की शक्ति के अभाव में पश्चाताप् के आँसू बहाने पड़ेंगे। जानते हुए भी हम कुछ नहीं कर सके, इस बात का गम होगा।

तोताराम

एक व्यक्ति को तोता पालने की बड़ी इच्छा थी, सो उसने तोता खरीदा और उसे प्यार से पालने लगा। वह उसे तोताराम के नाम से पुकारता था। तोताराम भी बड़ा होशियार था। उसके सामने कोई भी बात कहो तो उसे उसी अंदाज में दोहराता था। तोताराम को बातों का अर्थ नहीं मालूम पड़ता था लेकिन जो सुनता था उसे दोहराता रहता था। एक दिन तोताराम नल पर बैठकर उसे घुमा रहा था जिस कारण पानी टपक रहा था। पानी को व्यर्थ बहता देखकर उसके मालिक ने कहा, ''तोताराम नल पर मत बैठो''। तोताराम ने वही बात दोहराई। तोताराम नल पर ही बैठकर बोल रहा था, ''तोताराम नल पर मत बैठो, तोता राम ...।"

आध्यात्मिक भाव – भक्तिमार्ग में पूरी गीता को आधे घन्टे में दोहराने वाले भी हैं तो गीता पर घन्टों भाषण करने वाले भी हैं लेकिन बाबा इन सभी को तोते माफ़िक कहते हैं क्योंकि वे केवल मुखोद्गत (कंठाग्र) किया हुआ पाठ पढ़ते हैं लेकिन उसका अर्थ तथा आध्यात्मिक रहस्य नहीं जानते। वर्तमान समय परमात्मा शिव सभी वेदों, शास्त्रों, ग्रंथों का सार सुनाते हैं एवं आध्यात्मिक रहस्य स्पष्ट करते हैं जिसे हम अपने जीवन में सहज धारण कर सकते हैं।

हातिमताई

यवन देश में निहायत साहब नाम का एक बादशाह रहता था। विवाह के बहुत दिनों के बाद उनकी बेगम साहिबा ने एक बहुत ही सुन्दर बच्चे को जन्म दिया जिसका नाम हातिमताई रखा गया। ज्योतिषियों ने बादशाह से कहा कि यह बच्चा बहुत ही अकलमन्द बादशाह होगा और सारी दुनिया में आपका नाम रोशन करेगा। धीरे-धीरे हातिम माता-पिता के लाड़-प्यार में पलकर जवान हुआ। उसकी खूबसूरती और बहादुरी की महिमा सारे संसार में फैल गयी। वह परोपकारी ऐसा निकला कि किसी भी जीव के लिए अपनी जान तक देने को तैयार हो जाता था।

खुराशान मुल्क में एक बादशाह रहते थे। उसी शहर में बरजख नाम का एक सौदागर भी रहता था जिसकी बेटी का नाम हुस्नबानो था। हुस्नबानो जब केवल बारह वर्ष की थी तब ही बरजख सौदागर की मौत हो गई। मृत्यु के पहले वह अपनी सारी जायदाद, हीरे जवाहरात अपनी एक मात्र बेटी के नाम कर, बेटी को राजा को सौंप गया। राजा भी उसे अपनी पुत्री की तरह समझते थे। बिना माँ-बाप की हुस्नबानो सदैव उदास रहती थी। एक दिन वह अपनी दाई को बुलाकर बोली – हे माता! यह संसार तो पानी के बुदबुदे समान है। पता नहीं हम भी कब मिट जायें, फिर ये रत्न, इतनी दौलत किस काम की होगी? अत: हमारी इच्छा है कि इस दौलत को धर्म-कार्य में खर्च करूँ और सृष्टि के समस्त विकारों से दूर कुँवारी ही रहूँ। दाई माँ बोली, बेटी अगर तुम्हारी ऐसी ही इच्छा है तो तुम एक काम करो। तुम अपने मकान के दरवाजे पर सात सवाल लिखकर टाँग दो और उन सात सवालों के नीचे यह लिखवा दो कि जो व्यक्ति इन सवालों का जवाब देगा मैं उसी के साथ विवाह करूँगी। उन सवालों का जवाब देना आसान नहीं होगा।

सवाल थे –

1. एक बार देखा है दूसरी बार देखने की इच्छा है।
2. नेकी कर दरिया में डाल।
3. किसी के साथ बुरा न कर, जो करेगा वैसा ही पायेगा।
4. सदा सच बोलने वाला सुख पाता है।
5. कोहनिदा की खबर ला दो।
6. मुर्गी के अण्डे समान मोती का जोड़ मिला दे।
7. हम्मामबाद - गर्द की खबर ला दे।

दाई माँ की बात हुस्नबानो को बहुत पसन्द आई और प्रसन्न होकर इन सातों सवालों को लिखवाकर दरवाजे पर टंगवा दिया और धर्म-कार्य में जुट गई। यह बात फैलते-फैलते खवारीज़म देश तक पहुँच गई। वहाँ के बादशाह का शहजादा मुनीरशामी था। वह हुस्नबानो की बड़ाई सुन बिना देखे ही उसका आशिक बन गया। प्रेम में दीवाना हो मुनीरशामी किसी से कहे बिना ही हुस्नबानो से मिलने चल पड़ा। मुनीरशामी हुस्नबानो से बोला – ''मैं आपको पाना चाहता हूँ और इसी विरह वेदना में डूबा रहता हूँ। मैं तुम्हारे साथ शादी करना चाहता हूँ।'' हुस्नबानो बोली - ''ऐ नौजवान, जो मेरे सातों सवालों का जवाब देगा उससे ही मैं शादी करूँगी।'' मुनीरशामी बोला - ''मैं जवाब दूँगा। आप सवाल करें।'' हुस्नबानो बोली ''पहला सवाल यह है कि एक बार देखा है, दूसरी बार देखने की इच्छा होती है''। सवाल सुनकर मुनीरशामी वहाँ से चल पड़ा। उसे समझ में नहीं आ रहा था कि वो क्या करे। विरह में पागल मुनीरशामी जगह-जगह भटकने लगा। इतने में यमन देश का शहजादा हातिमताई शिकार खेलता हुआ वहाँ आ पहुँचा। उसे हृदय विदारक आवाज़ में रोता हुआ मुनीरशामी दिखा। पास जाकर हातिमताई ने बात पूछी तो मुनीरशामी ने सारी कथा उसको सुनाई। हातिम बोला - ''तू चिन्ता मत कर। मैं तेरी उससे शादी कराके ही

रहूँगा।'' ऐसा कहकर हातिम मुनीरशामी को लेकर हुस्नबानो के पास पहुँचा और बोला, ''तुम्हारे सातों सवालों का जवाब मैं दूँगा लेकिन शादी मुनीरशामी से ही करनी पड़ेगी।'' हुस्नबानो ने मान लिया। हुस्नबानो से पहला सवाल जानकर हातिम वहाँ से निकल पड़ा।

चलते-चलते हातिम एक बियाबान जंगल में जा पहुँचा। वहाँ पहुँचते ही देखता है कि एक भेड़िया एक हिरणी को शिकार बनाने हेतु उसके पीछे दौड़ता जा रहा है। उसको देख हातिम को दया आई और उसने भेड़िये को डांटा। भेड़िया डर गया और बोला कि ''हे दयामूर्ति हातिम! तुम्हारे कहने से मैं इसे छोड़ देता हूँ लेकिन मेरी भूख का क्या होगा?'' यह सुनकर हातिम ने तलवार से अपनी दोनों जांघों से थोड़ा-थोड़ा माँस काटकर भेड़िये को खिलाया। भेड़िये की भूख शान्त हो गई और फिर हातिम से उसने वन में भटकने का कारण पूछा। हातिम ने सारी कहानी सुनाई। हातिम की बात सुनकर भेड़िये ने कहा – ''मैं कभी-कभी वहाँ जाता हूँ और पुराने लोगों से पता चलता है कि उस जगह का नाम है दस्तहवेदा (प्रगट नगर)।'' हातिम ने भेड़िये से दस्तहवेदा का रास्ता पता किया और वहाँ के लिए चल पड़ा। रास्ते में गीदड़ों की मदद से हातिम ने अपने घावों को ठीक कर लिया। वहाँ से हातिम आगे चल पड़ा। रास्ते में उसे दो रीछों ने पकड़ लिया और रीछराज के पास पेश किया। रीछराज उसे अपनी पुत्री, जो मानव के समान हुस्न की मालिक थी, के साथ विवाह करने के लिए मजबूर करने लगा और दूसरे ही दिन अपनी पुत्री का विवाह हातिम के साथ कर दिया। कुछ दिनों के बाद हातिम रीछराज और अपनी पत्नी से आज्ञा ले सवाल का हल ढूँढने आगे निकल पड़ा। रास्ते में भयानक जंगल मिला जहाँ एक भयंकर नाग हातिम को निगल गया। हातिम सांप के पेट में मरा नहीं क्योंकि चलते वक्त रीछराज की बेटी ने एक मुहलरा उसको दिया था जिसके करिश्मे से वो सांप के पेट में भी जीवित रहा। सर्प ने दु:खी होकर उल्टी द्वारा उसे पेट से बाहर निकाल दिया। हातिम प्रसन्न होकर आगे चल पड़ा। चलते-

चलते एक तालाब पर पहुँचा। वहाँ पहुँचते ही एक स्त्री तालाब से निकली और हातिम को पकड़कर तालाब के अन्दर एक बाग में ले गई और गायब हो गई। वहाँ की स्त्रियाँ हातिम को एक सुन्दर से भवन में ले गयी। वहाँ पर सब जगह परियों की तस्वीरें टंगी थी। इतने में उन तस्वीरों में से एक सुन्दर अप्सरा निकलकर उसके सामने खड़ी हो गई। हातिम ने तीन दिन, तीन रात उससे कुछ न कहा। एक रात उससे रहा न गया। उसने उस पर मोहित हो, हाथ पकड़कर अपनी ओर खींचना चाहा। जैसे ही हाथ पकड़ा वैसे ही उस अप्सरा ने हातिम की छाती पर जोर से लात मारी और वह बेहोश हो गया। होश आने पर देखा कि वहाँ पर न तो कोई बाग है न ही भवन। वह एक सुनसान जंगल में लेटा पड़ा है। फिर हातिम ने मन में सोचा कि यही वह दस्तहवेदा है जिसे एक बार देखने पर दोबारा देखने की इच्छा होती है। इस तरह हातिम ने पहले सवाल का जवाब हासिल कर लिया।

इसी तरह हातिम ने सातों सवालों का जवाब हासिल कर लिया। हर किस्से में हातिम ने, रीछराज की बेटी के दिये हुए मुहलरे से अपने को हर संकट से बचाया और अन्य कइयों को भी बचाया। दूसरे किस्से में, देवों के बादशाह की स्त्री को आँखों में कई सालों से दर्द हो रहा था। हातिम ने रीछ की बेटी का दिया हुआ मुहलरा पानी में घिस कर उसकी आँखों में लगा दिया। लगाते ही उस स्त्री की पीड़ा जाती रही और दोनों आँखें खुल गयी। जब हातिम एक ऊंचे पहाड़ पर चढ़ने लगा तो सैंकड़ों परिन्दों ने आकर हातिम को उठाकर, जंजीरों में बांध कर आग लगा दी। उन परिन्दों ने सोचा कि यह जलकर राख हो जायेगा परन्तु रीछ की बेटी के मुहलरे के प्रभाव से वह आग से बचकर आगे चल पड़ा। तीसरे किस्से में – एक लाल सांप ने हातिम पर फुफकार मारना शुरू कर दिया। उसकी फुफकार का जहर आग बनकर आसमान तक फैल रहा था। वो सांप हातिम को जलाकर राख कर देना चाहता था परन्तु रीछ की बेटी के मुहलरे की वजह से उसका बाल भी बांका न हो सका। एक अन्य

जगह पर मुहलरे को मुँह में रखकर वह कड़ाहे में कूद गया। मुहलरे की वजह से खौलता घी भी पानी की तरह ठण्डा हो गया।

आध्यात्मिक भाव – मुहलरे की वज़ह से हातिम अनेक संकटों को पार कर सका और विजय को प्राप्त किया। शिव बाबा का दिया हुआ ज्ञान और बाबा की याद मुहलरे के समान है। जब कोई परिस्थिति या संकट आता है तो बाबा की याद और ज्ञान ही हमें बचा सकते हैं और दूसरों को भी हम परेशानी से बचा सकते हैं।

संकल्पों का प्रभाव

एक साधु गाँव-गाँव फिरकर सभी को उपदेश देता था। एक दिन फिरते-फिरते एक गाँव में पहुँचा। वहाँ उपदेश देते हुए उसने कहा कि व्यक्ति के संकल्पों के आधार पर ही उसका स्वभाव बनता है। यह सुनकर एक व्यक्ति को आश्चर्य हुआ कि संकल्पों के आधार पर स्वभाव बनना कैसे सम्भव है? उसने साधु से इस शंका का समाधान करने के लिए कहा। संकल्प शक्ति के प्रभाव का अनुभव कराने के लिए साधु ने उस व्यक्ति से कहा कि जैसे मैं कहूँ वैसे आपको करना होगा। व्यक्ति ने साधु की शर्त मान ली और साधु ने उससे कहा कि आज से तीन मास तक स्वयं को एक भैंस समझकर हर कर्म करो। क्यों, क्या, कैसे के प्रश्न उत्पन्न न कर चलते-फिरते, देखते, खाते, सोते समय सदैव स्वयं को भैंस निश्चित करो। उस दिन से उस व्यक्ति ने स्वयं को भैंस समझना शुरू कर दिया। भोजन करते समय वह समझता कि मैं भैंस घास खा रही हूँ। चलते-फिरते, उठते-बैठते सदा स्वयं को भैंस समझता था। इस तरह तीन मास बीत गये।

तीन मास के पश्चात् वह साधु पुन: उस गांव में आया और उस व्यक्ति से मिलने हेतु उसके घर पहुँचा तो वह व्यक्ति घर के अन्दर था और साधु बाहर। घर का दरवाज़ा आधा खुला और आधा बन्द था। साधु ने अन्दर बैठे व्यक्ति को बाहर आने के लिए कहा। उस समय तक उस व्यक्ति को इस बात की विस्मृति हो चुकी थी कि वह एक मनुष्य है इसलिए उसने साधु से कहा कि ''मैं तो एक भैंस हूँ, मैं इतने छोटे द्वार से बाहर कैसे आ सकता हूँ?'' वास्तव में दरवाज़े से व्यक्ति सहज ही बाहर आ सकता था परन्तु स्वयं को भैंस निश्चित करने के कारण वह बाहर निकलने में स्वयं को असमर्थ समझ रहा था। तब साधु ने उसकी शंका का समाधान करते हुए समझाया कि किस तरह संकल्पों के आधार से स्वभाव में परिवर्तन आता है। इस तरह उस व्यक्ति को संकल्पों

के प्रभाव का अनुभव हुआ।

आध्यात्मिक भाव – जैसा बीज बोते हैं वैसा ही फल मिलता है। संकल्प बीज की तरह हैं। जैसे संकल्प मन में बोते हैं वैसा फल अर्थात् व्यक्तित्व बनता है। कलियुग के अन्त में जब आत्मा अपनी श्रेष्ठता खो बैठती है तब निराकार शिव बाबा अवतरित होकर अपने बच्चों को राजयोग सिखाते हैं। राजयोग अर्थात् परमात्म स्मृति में निरन्तर रमण करते रहना। वर्तमान समय बाबा हमें ईश्वरीय स्मृति के द्वारा ईश्वरीय संस्कार निर्माण करने की शिक्षा देते हैं जिससे सहज ही व्यक्ति के आसुरी संस्कार बदल दैवी संस्कार बन जाते हैं।

अमरकथा

एक प्राचीन कथा के अनुसार, भगवान शिव ने माता पार्वती को अमरनाथ की गुफा में 'सृष्टि की रचना' की कथा सुनाई थी। कथा इस प्रकार है: एक बार नारद जी ने माता पार्वती को पूछा, ''माता! स्वर्ग में सभी देवतायें मोतियों की माला धारण करते हैं लेकिन शिव जी के गले में मुंड की माला क्यों?'' माता पार्वती जी ने इस विषय में अपनी अज्ञानता बताई। नारद जी के कहने पर पार्वती जी ने स्वयं शिव जी से इस विषय में पूछने का संकल्प किया।

माता पार्वती ने शिव जी से मुंड माला के विषय में पूछा तो शिव जी ने इस विषय में न पूछने का अनुरोध किया लेकिन माता पार्वती नहीं मानीं और जिद्द करने लगीं कि उन्हें इस रहस्य के बारे में बताया जाये। तब शिव जी ने कहा, ''सुनो महादेवी, मेरे गले में जितने मुंड हैं उतने जन्म आप ले चुकी हैं। आपकी प्रत्येक खोपड़ी की मैं माला बनाकर अपने गले में धारण करता हूँ।'' भगवान की यह बात सुनकर माता के मन में विचार आया, ''मैं शिवजी की अर्धांगिनी तब फिर मृत्यु का चक्कर क्यों? अगर शिवजी अमर हैं तो मैं क्यों नहीं?'' माता पार्वती ने शिव जी से अमरत्व प्राप्ति के बारे में पूछा।

शिव जी ने कहा, ठीक है। मैं आपको अमरत्व प्राप्ति की कथा सुनाता हूँ। आपको बहुत ध्यान से सुनना होगा। आपको कथा सुनते-सुनते हामी भरनी होगी। अगर आप बीच में सो गयी और हामी भरना बंद कर दिया तो मेरी कथा बीच में ही रुक जायेगी। कथा फिर से सुनाई भी नहीं जायेगी। अगर आपको ये शर्तें मंजूर हों तो कहिए। माता पार्वती ने दोनों शर्तें मान ली।

यह अमरकथा पार्वती जी के सिवाए और कोई न सुन ले, यह भी ध्यान रखना था। अत: शिव जी, पार्वती जी को लेकर हिमालय के एक निर्जन, बर्फीले पहाड़ की गुफा में पहुँचे। कथा प्रारंभ करने के पहले भगवान ने कापाली

रुद्र को प्रकट किया। उस कापाली रुद्र ने गुफा के आसपास जीवसृष्टि, पेड़, पशु आदि को भस्म कर दिया। इसके पश्चात् भगवान ने आसन लगाकर अमरकथा सुनाना प्रारम्भ किया। कथा सुनते-सुनते पार्वती माता को नींद आ गई। एक कबूतर था जो कथा के बीच में हामी भरता रहा और शिव जी ने समझा कि माता पार्वती हामी भर रही हैं। कापाली रुद्र ने गुफा के चारों ओर जीवसृष्टि को भस्मीभूत तो कर दिया था लेकिन आसन के नीचे एक कबूतर रह गया था। कुछ समय बाद माता पार्वती की नींद टूटी तो उन्होंने शिव जी से माफी माँगी।

शिव जी आश्चर्यचकित रह गये। वे सोचने लगे कि कथा के बीच में कौन हामी भर रहा था? उन्हें बहुत क्रोध आया। अपना त्रिशूल उठाकर खड़े हो गये और तभी आसन के नीचे से एक कबूतर उड़कर भागा। शिव जी उसके पीछे भागे। कबूतर तीनों लोकों में आश्रय लेने के लिए फिरता रहा परन्तु किसी ने भी उसे आश्रय नहीं दिया। वह कबूतर मृत्यु के भय से महर्षि वेद व्यास के आश्रम में पहुँचा। उस समय वेद व्यास जी की पत्नी आलस्य और नींद में थीं। उन्होंने जम्भाई (उबासी) ली और मुख खोला तो कबूतर छोटा होकर मुख से होता हुआ उनके पेट में पहुँच गया। भगवान ने सब देखा परन्तु स्त्री-हत्या का पाप वह नहीं करना चाहते थे। अत: वापस चले गये।

कबूतर बारह वर्ष तक महर्षि वेद व्यास की पत्नी के उदर में रहा। एक बार उनके पेट में बहुत दर्द हुआ तो वे वहाँ ब्रह्मा जी के पास गयीं। ब्रह्मा जी उन्हें साथ लेकर विष्णु जी के पास गये। विष्णु जी ने कहा, ''इस समस्या का समाधान मेरे पास नहीं है। इस समस्या का हल केवल शिवजी ही कर सकते हैं। आप शिव जी के पास जायें।'' इस प्रकार सभी शिव जी के पास पहुँचे। शिव जी ने सारी बातें सुनी और कहा कि आप सब पक्षीराज की स्तुति करें। सबने पक्षीराज की स्तुति की और अभयदान की प्रार्थना भी की। पक्षीराज

बाहर निकलने को तैयार नहीं थे। अमरकथा के बल पर पक्षीराज को चारों वेदों का और अठारह पुराणों का ज्ञान हो चुका था। पक्षीराज ने कहा, ''जब तक समस्त सृष्टि निर्मोही नहीं बनती मैं उदर से बाहर नहीं आऊंगा।'' विष्णु जी ने अपनी दिव्य-शक्ति के बल पर क्षण भर के लिए समस्त जगत को निर्मोही बना दिया। इस पर कबूतर मानव के रूप में बाहर आ गया और वही बालक सुखदेव के नाम से विश्व-विख्यात हुआ।

अन्त में सुखदेव सबकी अनुमति लेकर घने जंगल में तप करने के लिए निकल पड़े। उन्होंने नैमिषारण्य में ऋषि-मुनियों को कथा सुनाने का आयोजन किया। वहाँ पर उन्होंने अमरत्व प्राप्त कराने वाली अमरकथा सुनाना प्रारंभ किया। भगवान शिव जी सोचने लगे कि अगर अमरकथा सुनकर सब अमरत्व प्राप्त कर लेंगे तो सृष्टि का संचालन नहीं हो सकेगा। तब शिव जी ने सबको वरदान दिया कि जो लोग अमरकथा सुनेंगे और अमरनाथ की यात्रा करेंगे, उन्हें अमरत्व तो प्राप्त नहीं होगा परन्तु शिव संदेश अवश्य प्राप्त होगा।

आध्यात्मिक भाव – अमरत्व प्राप्ति का अर्थ है मृत्यु की भावना, मृत्यु के भय से दूर रहना। वह तभी हो सकता है जब स्वयं को स्थूल देह नहीं बल्कि एक अविनाशी आत्मा समझें। इसके लिए अमरनाथ शिव बाबा आत्मा रूपी पार्वती को, आत्मा जो अमर है, उसकी कहानी सुनाते हैं। अविनाशी आत्मा के ज्ञान से अमरनाथ शिव बाबा अपने बच्चों को अमर बनाकर अमरलोक (सतयुग) में ले जा रहे हैं।

राजा हरिश्चंद्र

यह एक प्राचीन हिन्दू राजा की कहानी है जोकि अपने वचन का आदर करने में पक्का था। एक दिन देवताओं के राजा देवेन्द्र सभी महर्षियों के साथ अपने दरबार में बैठे हुए थे। देवेन्द्र ने पूछा, ''तुम इस पृथ्वी पर किसको सबसे सच्चा समझते हो।'' वशिष्ठ ऋषि ने राजा हरिश्चन्द्र का नाम बताया लेकिन ऋषि विश्वामित्र इस पर विश्वास नहीं कर पा रहे थे। वे राजा हरिश्चन्द्र की सच्चाई को जाँचना चाहते थे। परीक्षा के लिए ऋषि विश्वामित्र, हरिश्चन्द्र के दरबार में हाज़िर हुए और चतुराई से उनसे एक ऐसा वचन ले लिया जिसके कारण राजा अपना राज्य तथा महल सब खो बैठे। आखिर में, जब राजा के पास कुछ भी नहीं बचा तब विश्वामित्र ने बहुत समय पहले किये गये यज्ञ की दक्षिणा माँगी। उसे देने में असमर्थ होने के कारण वचनबद्ध राजा ने एक गुलाम की तरह श्मशान भूमि में सेवा करना स्वीकार किया। राजा की पत्नी, रानी चन्द्रमति, एक अमीर आदमी के घर घरेलू नौकरानी का काम करने वाली बनकर रह रही थी। उनके जवान लड़के की साँप के काटने से मृत्यु हो गई थी। चन्द्रमति मृत बालक को श्मशान लेकर गई लेकिन सच्चे हरिश्चन्द्र ने उसका दाह संस्कार नहीं किया क्योंकि वह दाह संस्कार के लिए पैसे नहीं दे सकती थी। उसी क्षण विश्वामित्र उपस्थित हुए और हरिश्चन्द्र की सच्चाई की प्रतिष्ठा को स्वीकार करते हुए उसके पुत्र को जीवित कर दिया और उसको उनका राज्य भी वापिस कर दिया। विश्वामित्र ने राजा को आशीर्वाद दिया कि तुम संसार में सत्य हरिश्चन्द्र के नाम से प्रसिद्ध होंगे।

आध्यात्मिक भाव – एक बार बुराइयों से दूर रहने का निश्चय कर लेने के बाद उन्हें वापस नहीं लेना चाहिए। कुछ लोग अपनी गलती का श्रेय बाहरी परिस्थितियों को देते हैं लेकिन बाबा इस कहानी से शिक्षा देते हैं कि

कोई भी परिस्थिति हो, कैसी भी परिस्थिति हो लेकिन एक बार शिव बाबा को बुराई दान में दे दी तो दुबारा गलती नहीं करनी चाहिए। इसीलिए कहा जाता है - ''धरत परिए पर धरम न छोड़िए''।

रूप बसन्त

विशाल नगरी में महाराज चन्द्रसेन की दो रानियाँ थीं। एक सुनीति जो बहुत ही भक्ति-भाव वाली थी, दूसरी कनकलता जो कि बहुत ही अभिमानी और अपनी ही मनमानी करने और कराने वाली थी। रानी सुनीति के दो बेटे थे - रूप कुंवर और बसंत कुंवर। दोनों ही बेटे बहुत ही एकाग्रता से राजविद्या पढ़ते थे। दूसरी रानी कनकलता का बेटा मान कुंवर बहुत ही उदण्ड और शरारती था। वह पढ़ाई पढ़ने की बजाए अपने मित्रों के साथ नगर में सबको परेशान कर अपना रोब जमाने निकल पड़ता था। छोटी-सी बीमारी में सुनीति रानी की मृत्यु के बाद रानी कनकलता ने दांवपेंच लगाकर दोनों कुंवरों को देश निकाला दिलवा दिया। राज्य से बाहर निकलने के बाद बड़े भाई रूप कुंवर ने छोटे भाई बसंत कुंवर को समझाया कि हमें किसी से भी यह नहीं कहना है कि हम महाराजा चन्द्रसेन के बच्चे राजकुमार हैं क्योंकि ऐसा करने से अपने बाप का नाम बदनाम होगा।

ये दोनों भाई जहाँ भी काम करने जाते तो कोमल हाथों में छाले पड़ जाते थे पर फिर भी सबकुछ चुपचाप सह लेते थे। वे जहाँ-जहाँ काम करते वहाँ-वहाँ दोनों के गुण, बोलचाल, रॉयल्टी, व्यवहार आदि को देख सब यही कहते कि ये कोई साधारण लड़के नहीं लगते हैं, ये तो जैसे राजकुमार लगते हैं। कार्य कराने वाले कभी-कभी उनको अपमानित भी करते थे, ज्यादा काम भी कराते थे परन्तु फिर भी दोनों ही कुंवर सदा अपकार करने वालों पर भी उपकार करते थे। वे कभी किसी का काम बिगाड़ते नहीं थे।

थोड़ा धन भी वे जरूरतमंदों को दान अवश्य करते थे। कभी भोजन करने बैठे और कोई मांगने वाला आ जाता तो जिसके घर पर काम करते थे वह उनको भगाने की कोशिश करता था लेकिन रूप-बसंत खड़े होकर अपना

भोजन उनको दे देते थे। आसपास रहने वालों की समस्याओं को सुनकर उन्हें कुछ न कुछ सुझाव देते थे और अपनी तरफ से भी कुछ मदद अवश्य करते थे। पूजा-पाठ आदि भी करते थे। जिस भी गाँव में जाते थे वहाँ के लोग उन्हों के पास अपनी समस्याओं को लेकर स्वत: ही आते थे।

एक बार उन्हें लगा कि हम छोटे-छोटे गाँवों में काम करते हैं, इससे अच्छा है कि हम किसी बड़े नगर में जाकर काम करें। यह सोचकर दोनों भाई नगर की ओर चल दिये। चलते-चलते घोर जंगल आया और रात हो गई। उन्होंने सोचा कि रातभर यहीं ठहर जाते हैं। रात के चार प्रहरों में से दो प्रहर एक भाई पहरा देगा और अगले दो प्रहर दूसरा भाई पहरा देगा, ऐसा निश्चय किया गया। सबसे पहले बड़े भाई रूप कुंवर ने छोटे भाई बसंत कुंवर को सुला दिया। दो प्रहर पूरे होने पर भी बड़े भाई की, छोटे को जगाने की इच्छा नहीं हुई लेकिन तीन प्रहर पूरे होते-होते अचानक बसन्त कुंवर की आंखें खुल गयीं। आसमान में तारे देखकर उसने कहा, भैया, आपने मुझे तीन प्रहर सोने दिया। अब आप आराम से सो जाइये। दिनभर चलने और तीन प्रहर जागरण की थकान के कारण रूप कुंवर गहरी नींद में सो गया। बसंत कुंवर जाग रहा था। उस समय पेड़ पर तोता-मैना आपस में बात कर रहे थे कि इस पेड़ पर एक साल में सिर्फ एक ही फल पकता है लेकिन यह फल ऐसा है कि जो इस फल को तोड़ेगा उसे विषैला नाग डसेगा और जो उसे खायेगा वह सुबह होते ही महाराजा बन जायेगा। लेकिन महाराजा बनते ही वह अपनी पुरानी याददाश्त भूल जायेगा। सिर्फ संस्कार इमर्ज रहेंगे। जब उसे कोई फिर से याद दिलायेगा तब ही उसे पुरानी स्मृति आयेगी। इसलिए आज तक कई लोगों ने यह फल खाने की कोशिश की लेकिन उन्हें विषैला नाग डस गया। तोता-मैना की ये बातें सुनकर बसंत कुंवर के मन में आया कि हम तो दोनों भाई हैं। रूप कुंवर ने तो ये बातें सुनी नहीं हैं तो मैं ऐसा करूं कि इस फल को तोड़कर बड़े भाई को खिला देता हूँ ताकि वह महाराजा बन जाये क्योंकि उनमें मेरे से भी ज्यादा

प्रजापालन के गुण हैं। वह प्रजा को बहुत सुखी रखेंगे (त्याग भावना)।

वह खुद फल खाकर महाराजा बन सकता था फिर भी उसने फल तोड़कर तुरन्त ही रूपकुंवर को जगाकर कहा, ''भैया, इस पेड़ पर बहुत ही मीठे फल थे। मैंने तो बहुत खाये, अब एक ही बचा है, आप इसे खा लो।'' ऐसा कहकर रूप कुंवर को फल खिला दिया। थोड़ी ही देर में एक विषैला नाग आया और बसंत कुंवर को डसकर एक पल में वहाँ से चला गया। बसंत कुंवर बेहोश हो गया। तब रूप कुंवर उसको उठाकर पास ही बहती हुई एक नदी के किनारे पर ले गया और दंश वाले भाग पर थोड़ा चीरा लगाकर पांव को बहते पानी में रखा ताकि खून के साथ जहर भी पानी में बह जाये। थोड़ा-सा उजियारा होने पर उसे थोड़ी ही दूरी पर नगर दिखाई दिया। वह किसी वैद्य को बुलाने के लिए उस ओर दौड़ पड़ा।

उस नगर के राजा को कोई वारिस नहीं था। राजा की मृत्यु के बाद राजपुरोहित ने कहा कि पूरे राज्य के लोग नगर चौक में इकट्ठे हो जायें और हथिनी जिस पर भी जल-कलष रखेगी वही इस राज्य का नया राजा बनेगा। उस अनुसार पूरे ही राज्य के लोग नगर-चौक में सुबह होने से पूर्व ही पहुँच गये।

दूसरी तरफ, रूप कुंवर वैद्य को ढूंढने जब राज्य में गया तो हर घर खाली था। वह जब नगर-चौक में पहुँचकर वैद्य से मिलकर उसको अपने साथ चलने की प्रार्थना कर ही रहा था कि उतने में ही हथिनी घूमती-घूमती उसी स्थान पर आकर ठहर गई और उसने रूप कुंवर के सिर पर ही जल-कलष रख दिया। कलष का जल सिर पर पड़ते ही रूप कुंवर पिछली याददाश्त भूल गया। सिर्फ राजाई संस्कार इमर्ज रहे। साधारण रूप वाला रूप कुंवर जो कि मूल रूप में राजाई कुल का ही बेटा था, अब सचमुच राजा बन गया। राज्याभिषेक के बाद जब उसने राज कारोबार संभाला तो पूरे ही राज्य में सुख-शान्ति का साम्राज्य

फैल गया। वह प्रजा को सब प्रकार की सुविधायें देने का ध्यान रखता। रात को और दिन में भी नगरचर्या करके लोगों के दु:ख-दर्द को जान लेता और फिर राज दरबार में चर्चा करके समाधान करता। उसका प्रजा के प्रति इतना वात्सल्य था कि थोड़े ही समय में वह प्रजाप्रिय राजा बन गया। उधर बसंत कुंवर नदी के बहाव में बहता हुआ उसी नगर के घाट के पास पहुँचा। तब कपड़े धोते हुए धोबी ने उसे बचा लिया और प्रयास करके उसे होश में ले आया। ठीक होने पर बसंत कुंवर ने अपने भाई रूप कुंवर को ढूंढने की कोशिश की। उसे पता चला कि वह इसी राज्य का महाराजा है लेकिन उसे यह भी पता था (पक्षी के कहने अनुसार) कि रूप कुंवर सारी ही याददाश्त भूल गया होगा और मैं जब याद दिलाऊंगा तभी उसे याद आयेगा। इसलिए वह युक्ति रचकर राज्य दरबार में पहुँच गया और वहाँ जाकर एक गीत सुनाया जिसमें अपनी पूरी जीवन कहानी सुना दी। गीत सुनते-सुनते महाराज रूप कुंवर को अपनी पुरानी स्मृति वापस इमर्ज हो गयी। और वह अपने भाई बसंत कुंवर को पहचान गया। बाद में उसे अपना मंत्री बना दिया और दोनों ही भाइयों ने बड़े ही सुचारू रूप से राज्य कारोबार चलाया।

आध्यात्मिक भाव – बाबा हम बच्चों को कहते हैं कि ''बच्चे, आप अभी वनवाह में हो इसलिए रहो साधारण रूप में लेकिन आपके बोलचाल, व्यवहार आदि से सभी को यह लगे कि ये कोई साधारण आत्मा नहीं हैं। ये तो ईश्वरीय कुल या दैवी कुल की आत्मायें हैं। जैसे बसंत कुंवर ने सारी बातों का पता होते भी रूप कुंवर को महाराजा बनाया उसी तरह तुम बच्चों में भी त्याग की भावना होनी चाहिए। जब तुम बच्चे सतयुग में राजा बन जाओगे तब तुम पुरानी याददाश्त, जो अभी ईश्वरीय ज्ञान के रूप में है, वह भूल जाओगे लेकिन तुम्हारे दैवी गुण संस्कारों में इमर्ज रहेंगे। कल्प के अन्त में मैं आकर तुम बच्चों को फिर से आदि-मध्य और अन्त का ज्ञान दूँगा तब फिर से तुम्हें पुरानी स्मृति इमर्ज हो जायेगी।''

खुदा दोस्त

कंधार के बादशाह अरवाजखान को कोई बेटा नहीं था इसलिए उन्होंने यह कायदा बनाया कि उसकी मृत्यु के बाद इस राज्य का कोई भी आदमी, जो बादशाह बनना चाहता हो, एक साल तक राज्य चलाये और फिर उसे नदी के पार भेज दिया जाए, जहाँ घना जंगल था। जो भी वहाँ जाता था जंगली जानवर उसे खा जाते थे यानि कि एक साल के बाद बादशाह को सजा-ए-मौत मिलती थी। उसी राज्य में आफताब नामक एक 20 साल का युवक रहता था। बचपन से ही अपने बाप के साथ मस्जिद में नमाज़ पढ़ने जाया करता था लेकिन उसने खुदा के साथ दोस्त का रिश्ता जोड़ लिया था। वह हर बात, हर कार्य अपने खुदा दोस्त को पूछकर ही करता था।

एक दिन आफताब (सुराज) के अब्बाजान ने घर पर आकर कहा कि कल हमारे बादशाह का अंतिम दिन है। परसों सुबह उन्हें नदी पार करा दी जायेगी लेकिन मौत के डर से इस साल कोई बादशाह बनने को तैयार नहीं है। तब आफताब ने अपने खुदा दोस्त से पूछा कि ''अब राज्य का बादशाह कौन बनेगा?'' खुदा दोस्त ने कहा, ''अब तुम बनोगे।'' आफताब ने कहा, ''क्या आप मुझे एक साल के बाद सज़ा-ए-मौत दिलाना चाहते हो। अगर मैं मर जाऊं तो मेरे अब्बा जान और अम्मी जान को कौन सम्भालेगा?'' तब खुदा दोस्त ने कहा, ''तुम बादशाह बनने जाओ, मैं जैसा-जैसा कहूँ वैसा ही करते जाओ।'' आफताब बादशाह बनने चला गया और बादशाह बनने के बाद प्रजा का बहुत ही अच्छा पालन, खुदा की मत प्रमाण करता रहा।

एक मास के बाद खुदा ने आफताब को कहा कि नदी के सामने वाला जंगल साफ करवा लो। उस अनुसार आफताब ने जंगल के पेड़ कटवाकर एक बड़ा-सा मैदान तैयार करवा दिया। अब खुदा दोस्त ने वहाँ पर एक राज महल,

एक किला और शहर बनाने के लिए कहा। वो उसी अनुसार बनाता चला गया। राज्य के खजाने से ही धन लेकर नदी के उस पार शहर बसाने लगा। उसमें सब प्रकार की सुख-सुविधायें निर्मित हो गयीं।

जब एक साल पूरा होने को आया तब कायदे अनुसार आफताब को तो नदी पार जाना ही था पर उसने पूरे शहर में ढिंढोरा पिटवा दिया कि नदी पार जो नया शहर बसा है उसमें मैं तो बादशाह बनूंगा ही लेकिन जिनको भी मेरे साथ आना हो उन्हें उनके दर्जे अनुसार घर मुफ्त मिलेगा। दूसरे दिन जब आफताब नदी पार गया तो सारे शहरवासी भी उसके साथ-साथ सुख-शान्ति पाने के लिए नदी पार चल दिये।

आध्यात्मिक भाव – इस कहानी से बाबा हम बच्चों को यही शिक्षा देते हैं कि अगर तुम मुझसे कोई भी सम्बन्ध जोड़कर, मेरी श्रीमत् अनुसार हर कार्य करोगे तो मैं तुमसे ऐसा श्रेष्ठ कर्म कराऊंगा कि तुम संगम की बादशाही तो पाओगे ही लेकिन भविष्य में भी बादशाही पाओगे और अभी तुमने जिन आत्माओं का कल्याण किया होगा वे भी प्रजा रूप में तुम्हारे साथ रहेंगी।

कर्मों की गुह्य गति

एक राजा की तीन लड़कियाँ थीं। वह तीनों की बहुत लाड़-प्यार से पालना करता था। धीरे-धीरे तीनों लड़कियाँ बड़ी हो गयीं। एक दिन भोजन करते समय राजा ने तीनों से पूछा कि आप किसके भाग्य का खा रही हो? किसके द्वारा आपको यह भाग्य, वैभव आदि प्राप्त हो रहा है? प्रथम और द्वितीय लड़की ने कहा कि यह सब प्राप्तियाँ हमें आपके आधार पर ही हो रही हैं लेकिन तीसरी लड़की ने उत्तर नहीं दिया। राजा ने उससे पुन: प्रश्न किया। तब उसने कहा कि मैं अपने भाग्य का खा रही हूँ। मेरे भाग्य में जो सुख, सन्तोष, वैभव आदि हैं उन्हें ही मैं भोग रही हूँ। मेरे कर्म अच्छे हैं और मेरे जीवन में पुण्यकर्मों का फल, जो निश्चित है, वही मुझे प्राप्त हो रहा है-अर्थात् मेरे भाग्य का फल ही मैं खा रही हूँ ना कि अन्य किसी के भाग्य का।

यह उत्तर सुनकर राजा बहुत क्रोधित हुआ। राजा ने कहा कि यदि आपकी प्राप्तियों में मेरा सहयोग नहीं है तो आपका इस राजभवन पर कोई अधिकार नहीं है। आपका विवाह एक गरीब व्यक्ति के साथ करायेंगे तब आप क्या करेंगी? लड़की ने उत्तर दिया कि मेरे भाग्य में वही है तो मैं उससे छूट नहीं सकती। यदि भाग्य श्रेष्ठ है तो झोपड़ी में भी खुशी से रह सकती हूँ।

इस प्रकार का उत्तर सुनकर राजा का क्रोध और बढ़ गया। राजा ने अपनी छोटी लड़की का विवाह एक गरीब बूढ़े व्यक्ति के साथ करवा दिया। लड़की ने राजभवन छोड़कर जाते समय राजा से कहा कि पिताजी, ''मेरे मन में आपके प्रति बहुत सम्मान है। किसी भी परिस्थिति में आवश्यकता पड़ने पर अपनी छोटी बेटी को नहीं भूलना।''

जिस गरीब बूढ़े व्यक्ति से राजा ने अपनी छोटी लड़की का विवाह किया था वास्तव में वह एक राजकुमार था। वह बहुत अच्छे व्यक्तित्व का धनी एवं

धैर्यवान व्यक्ति था परन्तु शापग्रस्त होने कारण गरीब और बूढ़ा हो गया था। कुछ समय बाद राजभवन में राजा का स्वास्थ्य बिगड़ना प्रारम्भ हुआ। चिकित्सकों ने जंगल से एक बूटी ले आने की सलाह दी। छोटी लड़की के पति ने बहुत कष्ट उठाकर राजा को जंगल से वह बूटी लाकर दी जिससे राजा का स्वास्थ्य बिल्कुल ठीक हो गया। छोटी लड़की का पति श्राप से मुक्त हो गया एवं राजा बनकर पुन: राजाई करने लगा तथा छोटी लड़की रानी बन गई। राजा को अपनी गलती की अनुभूति हुई और उसने लड़की से क्षमा माँगी।

आध्यात्मिक भाव – प्रत्येक व्यक्ति को अपने कर्मों का फल दु:ख व सुख के रूप में भोगना ही पड़ता है। इससे कोई भी छूट नहीं सकता। अब बाबा हमें कर्मों को श्रेष्ठ बनाने की शिक्षा दे रहे हैं एवं सत्कर्मों के आधार पर स्वर्ग का राज्य आधिकार प्राप्त करा रहे हैं।

सागर मन्थन

एक बार इन्द्र का राज्य, उनके द्वारा ऋषि दुर्वासा का निरादर होने से नष्ट हो गया था। वे भगवान विष्णु के पास गये। उन्होंने इन्द्र को क्षीर-सागर मंथन करने और उसमें असुरों की सहायता लेने की सलाह दी ताकि वह (इन्द्र) और देवता अमृत पाने के भागीदार हो सकें, जो उन्हें अमर बनायेगा और खोया हुआ राज्य वापिस मिलने में सहायता करेगा। विष्णु की सलाह के अनुसार देवतागण असुरों के पास गये। अन्त में वे सब क्षीर-सागर का मन्थन करने के लिए राज़ी हो गये। इस काम के लिए उन्होंने मन्दराचल पर्वत और महान सर्प वासुकी की मदद ली। नाग देवता वासुकी को रस्सी की जगह और पर्वत मन्दराचल को मथानी की जगह काम में लिया गया। जब समुद्र का मन्थन चल रहा था तो कई प्रकार की अद्भुत-अद्भुत सम्पदा समुद्र से बाहर आयी।

सबसे पहले आने वाला हलाहल अर्थात् भयंकर विष था जिसने पूरे विश्व को निगलकर नष्ट करने की धमकी दी। जब कोई भी इस विष को लेने को तैयार नहीं हुआ तो शिव जी उसे स्वीकार करने के लिए आगे बढ़े। उसके बाद कामधेनु (इच्छा पूर्ण करने वाली गाय), उच्चैश्रवा (सफेद घोड़ा), एरावत (सफेद हाथी), कौस्तुभमणि (एक दुर्लभ हीरा), कल्पवृक्ष (इच्छा पूर्ण करने वाला वृक्ष), लक्ष्मी (धन की देवी), वरुण और आखिर में आयुर्वेदाचार्य धन्वन्तरी अपने कुशल हाथों में अमृत पात्र लिये बाहर आये। आखिरी वस्तु को छोड़कर बाकी सब देवों और असुरों में बाँटी गई। अमृत आखिरकार विष्णु की एक चाल से (अभिनय द्वारा) देवताओं में ही बाँटा गया। उन्होंने मोहिनी का रूप धारण कर राक्षसों को छला और मोहित किया जिससे वे थोड़ी देर के लिये अमृत के बारे में भूल गये। तब तक विष्णु जी देवताओं को अमृत बाँटते रहे और वे लेते रहे। अमृत के असर से देवता न केवल अमर हुए बल्कि उन्होंने राक्षसों को भी हरा दिया।

आध्यात्मिक भाव – यह कथा, एक मानव आत्मा के उच्च स्थान प्राप्त करने के आध्यात्मिक पुरुषार्थ का वर्णन करती है। निराकार शिव बाबा द्वारा दिये गये ज्ञान की एक समुद्र से तुलना की गई है। जब कोई समुद्र की गहराई में जाता है तो उसे हीरे, माणिक मिलते हैं। उसी तरह जब कोई ज्ञान के सागर की गहराई में जाता है और मन्थन करता है तो उसे कई अमूल्य आध्यात्मिक रहस्य मिलते हैं। पर्वत मन्दराचल एकाग्रता और दृढ़ता को दर्शाता है। कहा गया है कि मन्दराचल पर्वत को विष्णु जी ने कछुवा बनकर अपनी पीठ पर रोक कर रखा था। यहाँ कछुए का अर्थ इन्द्रियों से है। एक राजयोगी को अपनी इन्द्रियों को जब जरूरत हो तभी काम में लाना चाहिए और जब चाहे तब समेट लेना चाहिए। महान सर्प वासुकी इच्छा को दर्शाता है। राजयोगी को अपनी सभी इच्छायें बुद्धि से नियन्त्रित करनी चाहिएँ। पुरुषार्थ की शुरूआत में आत्मा जिस दु:ख और दर्द से गुज़रती है उसका चित्रण हलाहल करता है। जब विपरीत ताकतों से मन का तेज़ मन्थन होता है तो तेज़ पीड़ा और अन्दर की अशान्ति बाहर आती है। ब्राह्मण जीवन की प्रारंभिक अवस्थाओं में मन सभी प्रकार की प्रतिक्रियाओं, इच्छाओं और आवेगों को बाहर निकालता है ताकि वह उनसे ठीक से काम ले सके परन्तु जब कोई सच्चाई के साथ आन्तरिक हलचल (हलाहल) का सामना करता है तो वही मास्टर शिव है। जब एक ब्राह्मण आत्मा इन सभी स्थितियों को पार कर ज्ञान की गहराई में जाती है तो वह आध्यात्मिक रहस्यों को समझ सकती है। जैसे कि लक्ष्मी, कल्पवृक्ष, कामधेनु इत्यादि के बारे में। आखिर में ब्राह्मण आत्मा निरन्तर पुरुषार्थ और ज्ञान (अमृत) के फल से भविष्य में उच्च स्थान प्राप्त करती है, पूजनीय बनती है और आत्मज्ञान से सत्युग में अमर हो जाती है।

तीज़री की कथा

प्रथम कथा –

एक बार खेल करते हुए पार्वती जी ने शिव जी की आँखों पर अपने हाथों को रखा तो पूरा विश्व अंधकार और दु:ख में डूब गया। जीवन बुझ गया, मानव और जानवर दु:ख से चिल्लाने लगे। शिव के ललाट से तीसरा नेत्र फूट पड़ा, विश्व में रोशनी फैल गई लेकिन रोशनी की वह ज्वाला इतनी तेज थी कि उसने हिमालय पर्वत को जलाकर राख कर दिया। पार्वती अपने पिता के राज्य का विनाश देखकर व्याकुल हो गयीं और उन्होंने शिव जी से इसे वापिस ठीक करने की विनती की। तब शिव जी ने ऐसा ही किया।

आध्यात्मिक भाव – जब सारी सृष्टि अज्ञान के अंधकार में डूबी हुई होती है तब शिव बाबा इस घोर अंधकार को मिटाने के लिए आत्माओं को ज्ञान का तीसरा नेत्र देते हैं जिससे सृष्टि पुन: सुख और शान्ति से सम्पन्न हो जाती है।

द्वितीय कथा –

यह कथा उत्तर भारत के करवाचौथ व्रत से सम्बन्धित है। इस व्रत में जवान लड़कियाँ और शादीशुदा औरतें अपने पति की लम्बी आयु की कामना करती हैं। एक रानी थी जिसने उस दिन व्रत रखा था। उसके भाइयों को इन रिवाज़ों पर विश्वास नहीं था और वे अपनी बहन को भूखा रहते हुए देख नहीं सके इसलिए उन्होंने घर से दूर जाकर आग जला दी। वे रानी के पास आये और बोले कि वह व्रत तोड़ सकती है क्योंकि चाँद निकल चुका है। दूर से रोशनी को देखकर रानी ने विश्वास कर लिया। व्रत के दौरान स्त्रियां सिलाई नहीं करती हैं लेकिन जब रानी ने कुछ सिलना शुरू किया तो प्रत्येक बार कपड़े में सूई डालते ही वह सूई उसके पति को चुभी जो कि बहुत दूर था। वह बेहोश हो

गया। जब रानी घर में अपने पति के पास गई तब उसे अपनी गलती मालूम हुई और उसने सुइयाँ निकालना शुरू कर दिया। उसने आँख की सूई अन्त में निकालने का सोचा ताकि वह यह नहीं देख पाये कि शरीर में कितनी सुइयाँ लगी हुई हैं। यह करने के पहले रानी तैयार होने गई। इतनी देर में उसकी नौकरानी ने राजा की आँखों से सुइयाँ निकाल दी और उसे कहा कि वह उसकी पत्नी है। राजा ने बेहाशी में अपनी याददाश्त खो दी थी इसलिए दासी की बातों पर विश्वास कर लिया। रानी को उनकी दासी की तरह रहना पड़ा। वह चुपचाप अपने पति की सेवा करती रही। उसके अच्छे व्यवहार से खुश होकर राजा ने उसकी इच्छा पूछी। रानी ने एक गुड़िया माँगी। उसने गुड़िया से, रानी के नौकरानी बनने और नौकरानी के रानी बनने की अपनी कथा कही। एक बार राजा ने इसे सुना और सच्चाई को पहचाना। अत: रानी को अपना सही स्थान पुन: प्राप्त हुआ।

आध्यात्मिक भाव – कहानी में दिखाया गया है कि रसम-रिवाज़ों की पालना में जो दोष हुआ उसी की वज़ह से रानी को दासी बनना पड़ा। सतयुग में आत्मायें दिव्यगुणों से सम्पन्न और स्वराज्य अधिकारी थीं लेकिन धीरे-धीरे आत्मा अपनी असली पहचान को भूलकर, ईश्वरीय निर्देशों को भूलकर जब देहाभिमान में आ गयी और विकारों में फँस गयी तब से आत्मा पूज्य से पुजारी और राजा से प्रजा बन गई (जैसे कथा में रानी दासी बनी)। आत्माओं को पुन: अपनी पहचान देने के लिए शिव बाबा, जो त्रिकालदर्शी हैं, इस धरती पर अवतरित होकर आत्मा के 84 जन्मों की कहानी सुनाते हैं। आदि सनातन देवा-देवता धर्म की जो आत्मायें होती हैं, 84 जन्मों की कहानी सुनने से उनको अपना असली अस्तित्व याद आता हैं (जैसे राजा को असली बात पता चलती है)। जब आत्मायें सर्वशक्तिमान् ईश्वर के निर्देशों पर चलती हैं तो अपना खोया हुआ राज्य पाकर अपनी सही स्थिति को पाती हैं (जैसे रानी, दासी से फिर से रानी बनी)।

अहिल्या

अहिल्या, ऋषि गौतम की पत्नी थी। दोनों शान्त और पवित्र स्थिति में, ध्यान-मग्न रहकर खुशियों भरे दिन व्यतीत करते हुए आश्रम में रहते थे। एक दिन ऋषि की अनुपस्थिति में इन्द्र, सुन्दर अहिल्या के प्रति अपवित्र संकल्प लेकर, गौतम का रूप धारण कर आश्रम में प्रवेश हुआ और अहिल्या की तरफ बढ़ा लेकिन अहिल्या ने इन्द्र को पहचान लिया। मेरी सुन्दरता ने देवों के देव को मोह लिया है, अहिल्या ने इस अहंकार के वश अपना विवेक खो दिया और इन्द्र की इच्छा पूरी की।

जब पाप घटित हो गया तो अपने पति गौतम के डर से और उसकी तेज आध्यात्मिक शक्ति को पहचानते हुए अहिल्या ने इन्द्र को वहाँ से जाने को कहा। इन्द्र अपराधिक चिंता से भाग रहा था। उसी समय ऋषि अपने नित्य कर्म से लौट रहे थे। ऋषि को तुरन्त अनुमान हो गया कि क्या घटित हुआ होगा। ऋषि बहुत क्रोधित हुए और इन्द्र को उसके पाप के लिए सज़ा देते हुए श्रापित किया। फिर ऋषि अपनी पत्नी की तरफ मुड़े और कहा कि हवा खाते हुए, बिना किसी को देखे, तू यहाँ पत्थर बनकर रहेगी। अहिल्या को शाप देने के बाद ऋषि अपना आश्रम छोड़कर हिमालय पर सादगी से जीवन बिताने चले गये। वर्ष बीतते गये, अहिल्या पत्थर की मूर्ति बनकर आश्रम में पड़ी रही जिस पर समय के साथ घास-फूस उगते गये। एक दिन राजा दशरथ के पुत्र, श्रीराम और श्रीलक्ष्मण आश्रम के पास से गुज़र रहे थे। वे मिथिला जा रहे थे। जब उन्होंने आश्रम की दुर्दशा को देखा तो उन्हें उस स्थान के बारे में जानने की इच्छा हुई। ज्यादा जानने के लिए राम जी आश्रम में प्रवेश हुए और राम के पैर से पत्थर का स्पर्श होते ही अहिल्या का शाप समाप्त हो गया और शापमुक्त अहिल्या अपनी पूरी सुन्दरता के साथ उनके सामने खड़ी हो गई।

आध्यात्मिक भाव – सत्युग में आत्मा अपने दिव्य गुणों के कारण पूजनीय (सुन्दर गुणवान) थी लेकिन द्वापरयुग में आत्मा देहाभिमान के कारण पांच विकारों की दासी बन गई। काम वासना, क्रोध, लोभ, मोह और अहंकार रूपी विकारों से आत्मा श्रापित होकर अपना रूहाब और ईश्वरीय शक्ति खोकर पत्थर बुद्धि बन गई (जैसे अहिल्या पत्थर बनी)। सभी आत्माओं के पिता परमात्मा शिव, पुन: इस धरती पर अवतरित होकर पत्थर समान बुद्धिहीन आत्माओं को अपने असली स्वरूप की पहचान देकर दिव्यगुणों की शक्ति प्रदान करते हैं जिससे फिर से वे अपने सुन्दर दैवी स्वरूप को प्राप्त कर लेती हैं।

ऊद्धव

ऊद्धव श्रीकृष्ण के एक आत्मीय, समीप मित्र व मंत्री थे। इसके अलावा वे बृहस्पति के प्रसिद्ध विद्यार्थी और एक महान प्रभावशाली व्यक्ति थे। गोपियों के साथ खेलने और बड़े होने के बाद श्रीकृष्ण वृन्दावन छोड़कर मथुरा गये तो उन्हें वहाँ राजकुमार घोषित किया गया क्योंकि वे मथुरा की गद्दी के उत्तराधिकारी थे। अपने कार्य व्यवहार के कारण श्री कृष्ण अपने बाल्यकाल के गाँव में वापस नहीं जा सके। लेकिन वे अपने पालक माता-पिता और पुराने खेल-सखाओं की भावनाओं को महसूस करते थे और उनकी भाव-तरंगें श्रीकृष्ण तक पहुँचती रहती थीं इसलिए श्रीकृष्ण ने अपने आत्मीय मित्र ऊद्धव को बुलाया और कहा कि आप वृन्दावन और गोकुल जाओ जहाँ गोप-गोपियाँ और सभी मित्र मेरी राह देख रहे हैं और उन्हों को समझाओ कि मेरे लिए वहाँ आना सम्भव नहीं है। ऊद्धव उस समय के सबसे बड़े ज्ञानी माने जाते थे। उन्हें अपनी बुद्धि- कुशलता पर घमण्ड भी था। ऊद्धव जब भी कृष्ण से बात करते थे तो उसे कृष्ण का साकार रूप नहीं दिखाई देता था बल्कि एक ज्योति ही दिखाई देती थी। ऊद्धव इतने ज्ञानी थे कि उन्होंने कृष्ण को यथार्थ रूप से पहचान लिया था। भौतिक स्वरूप की जगह वह हमेशा एक ज्योति को देखते थे। जब कृष्ण ने कहा कि गोपियाँ उनसे जुड़ी हुई हैं तो ऊद्धव समझ नहीं सके। उन्होंने सोचा कि गोपियाँ क्यों कृष्ण से जुड़ी हुई हैं? माया के कारण वे प्रेम, प्यार का अनुभव कर रहीं हैं लेकिन यह प्यार उन्हें काफी दर्द तकलीफ पहुँचा रहा है।

ऊद्धव ने हर एक को ऐसा मोह न रखने की समझानी देने का संकल्प किया लेकिन वह जब वृन्दावन पहुँचे तो कोई उनकी सुनना नहीं चाह रहा था। वे सब कृष्ण के वापिस आने का इन्तज़ार कर रहे थे। उन्होंने ऊद्धव से कहा कि तुम सबसे बड़े ज्ञानी हो सकते हो लेकिन तुमने अभी तक भगवान का प्यार

अनुभव नहीं किया है इसलिए तुम्हारा ज्ञान अभी अधूरा है। यदि तुम प्यार का अनुभव करो और उससे उत्पन्न दु:ख-दर्द को महसूस कर सको तब तुम जानोगे कि हम क्या महसूस कर रहे हैं। ऊद्धव ने ईश्वर के प्रति उस प्रेम का अनुभव अभी तक नहीं किया था इसलिए उनका विवेक और ज्ञान अधूरा था। उन्हें इस घटना से संदेश मिला कि ईश्वर को पाने के लिए केवल ज्ञान ही काफी नहीं है लेकिन अटूट प्रेम की भावना भी आवश्यक है।

आध्यात्मिक भाव – ईश्वरीय ज्ञान को समझने के लिए बुद्धि चाहिए लेकिन स्वयं ईश्वर को समझने के लिए भावना ज़रूरी है। बिना भावना के ज्ञान अधूरा है, बिना अनुभव के ज्ञान बेकार है इसलिए मन और बुद्धि में ज्ञान और भावना का सन्तुलन होना चाहिए। कहते हैं कि श्रीकृष्ण उसके बाद कभी गोकुल नहीं लौटे। उन्होंने अपनी बाँसुरी पीछे छोड़ दी और उसे कभी दुबारा नहीं बजाया लेकिन मथुरा में रह रहे कृष्ण, वृंदावन और गोकुल में रह रही गोपियों से कभी दूर नहीं थे। वे हमेशा मन से जुड़े हुए थे। गोपियों ने अपना जीवन अपने पतियों, बच्चों के साथ और घर गृहस्थी में गुजारा लेकिन उनके मन में भगवान हमेशा बसे हुए थे। नींद में भी वे भगवान के बारे में सोचा करती थीं। यही प्रेम की पहचान है लेकिन कभी-कभी जब हम स्वयं को ज्ञानी समझ लेते हैं तो घमण्ड भी आ सकता है। स्वयं को दूसरे व्यक्तियों से समझदार समझने के भाव को अहंकार कहते हैं जो ईश्वर से दूर ले जाता है। यही ऊधव के साथ हुआ। अपनी बुद्धि-विवेक के घमण्ड में आकर उन्होंने शुद्ध भक्ति और प्रेम के अनुभव को खो दिया। इसलिए शिव बाबा अपने बच्चों को ज्ञान के साथ-साथ गोपियों की तरह भावनायुक्त होने की सलाह भी देते हैं। देहधारियों पर प्रेम और मोह रखने से दु:ख ज़रूर मिलता है लेकिन वही प्यार अगर परमात्मा से हो तो ऐसी आत्मायें कितनी भाग्यशाली होंगी। सुख की अनुभूति के लिए परमात्मा के साथ सच्चे दिल का प्यार वा शुद्ध मोह रख उसी में लवलीन रहना है।

कामधेनु

हिन्दू पुराणों में कामधेनु नामक दिव्य गाय का बहुत गायन है। कहते हैं कि यह गाय सर्व की मनोकामनायें पूर्ण करने वाली है। समुद्र मन्थन में प्राप्त सम्पदा में से कामधेनु एक है। कपिल मुनि के पास यह गाय थी। शिव बाबा ने मम्मा को कामधेनु की उपाधि दी है। मम्मा सर्व की श्रेष्ठ आशाएँ पूर्ण करती थीं। शिव बाबा सब ब्राह्मण बच्चों को भी मम्मा-बाबा समान सर्व की इच्छाएँ पूर्ण कर सर्व को सन्तुष्ट करने की प्रेरणा देते हैं। जिसकी अपनी सर्व कामनायें पूरी होंगी वही औरों की कामनायें पूरी कर सकेंगे। प्राप्ति स्वरूप बनने से औरों को प्राप्ति करा सकते हैं। उसके लिए शिव बाबा अपने बच्चों को कहते हैं कि सदैव अपने को दाता अथवा महादानी समझो।

सावित्री सत्यवान
(देवी भागवतम्)

प्राचीन भारत में अश्वपति नामक राजा राज्य करता था। उसकी कोई सन्तान नहीं थी। बहुत समय भगवान की आराधना करने के बाद उसको एक बेटी हुई जिसका नाम उसने सावित्री रखा। सावित्री बहुत सुन्दर व बुद्धिमान थी। एक बार सावित्री ने एक बहुत सुशील युवक सत्यवान को देखा। वह अपने बूढ़े व अंधे पिता, जिसने अपना राज्य खो दिया था, की बहुत श्रद्धा से सेवा कर रहा था। सावित्री को सत्यवान की पितृ-भक्ति व श्रद्धा बहुत अच्छी लगी। उसने सत्यवान से विवाह कर लिया। परन्तु विवाह के एक साल में ही सत्यवान की मृत्यु हो गयी। अपनी बुद्धिमता द्वारा उसने धर्मराज से अपने पति के प्राण वापस लेकर उसे पुन: जीवित कर दिया।

आध्यात्मिक भाव – इस कहानी से बाबा हमें शिक्षा देते हैं कि आपका भी अपने पतियों के पति परमात्मा से सच्चे दिल का प्यार होना चाहिए। परन्तु ऐसी कहानियाँ तो केवल दन्त कथायें हैं। आत्मा जो एक बार शरीर छोड़कर चली जाती है वह फिर वापस नहीं आ सकती।

सन्त सूरदास

सन् 1478 में दिल्ली के नज़दीक सिही गांव में एक गरीब ब्राह्मण परिवार में एक अंधे लड़के का जन्म हुआ। उस लड़के की न ही परिवार वाले और न ही पड़ोसी परवाह करते थे। उसके तीन भाई थे। अंधा लड़का जब तीन साल का था तब उसका वास्तविक नाम सभी भूल गये। सब उसे ''ठसुर'' अर्थात् अंधा कह कर बुलाते थे। उसी का नाम आगे चलकर पड़ा सूरदास।

सूरदास जब भी भजन सुनते थे तो उनका मन खुशी से नाच उठता था। वह सोचते थे कि मैं कैसे गीत गाऊँ? उन्होंने साधना आरम्भ कर दी। चौदह साल की उम्र में ही गायक बने। सब उन्हें चाहने लगे। इसलिए नहीं कि वे अच्छा गाते थे परन्तु इसलिए कि भगवान के प्रति उनकी बहुत श्रद्धा व प्रेम था। उनकी भक्ति व निष्ठा के कारण उनमें अद्‌भुत शक्ति विकसित हुई। जैसे यदि किसी व्यक्ति का जानवर खो जाता था तो सूरदास उसका पता बता देते थे। एक बार भगवान, सूरदास की भक्ति पर प्रसन्न होकर उनके सामने प्रत्यक्ष हो गये और भगवान ने सूरदास को दृष्टि भी प्रदान की। सूरदास, जिन्होंने अभी तक अपनी स्थूल आँखों से कुछ भी नहीं देखा था, भगवान का दिव्य रूप देखकर बहुत प्रसन्न हुए। सूरदास की भक्ति इतनी गहरी और ऊंच थी कि उनको अब इन आँखों से पतित दुनिया को देखने की इच्छा बिल्कुल नहीं थी। भगवान का रूप ही अपने मन में वे बसाना चाहते थे। इसके लिए सूरदास ने फिर से अपनी आँखें फोड़ लीं। यही है सूरदास की भक्ति का प्रत्यक्ष प्रमाण।

सूरदास लम्बी आयु तक जीवित रहे। वे श्रीकृष्ण की बाल्य क्रीड़ाओं का वर्णन अपने भजनों में करते थे। आज भी सूरदास के भजन गाए जाते हैं। सूरदास नेत्रहीन होते हुए भी परमात्मा का प्यार अपने दिव्य चक्षु द्वारा अनुभव किया करते थे। परमात्मा किसी को भी, चाहे वह व्यक्ति काना, लूला, लंगड़ा

या शरीर से कैसा भी हो उसे अपने बच्चे के रूप में स्वीकार करते हैं। जो निश्चय एवं स्नेह से परमात्मा को याद करते हैं, परमात्मा उन्हें अपने हृदय-सिंहासन पर स्थान देते हैं।

दिलवाड़ा मन्दिर

जैनियों का एक विलक्षण मंदिर, देलवाडा मन्दिर, माऊंट आबू के दर्शनीय एवं आकर्षक स्थानों में से एक है। मन्दिर के सुन्दर स्थानों में वहाँ का 108 कमरों वाला स्थान विशेष तपस्वी आत्माओं का यादगार है जिसमें एक-एक राजयोगी तपस्या में बैठा हुआ दिखाया है। छत पर सुन्दर स्वर्ग का दृश्य सजा हुआ है। शिव बाबा अपने ब्राह्मण बच्चों को ज्ञान और राजयोग सिखा रहे हैं। जो निरन्तर याद में रहकर पुरुषार्थ करते हैं वे स्वर्ग में जाने के अधिकारी बनते हैं। मनुष्यों को यह पता नहीं है कि स्वर्ग आसमान में नहीं है। आने वाली दुनिया अर्थात् सतयुग ही स्वर्ग है। इसे न जानने के कारण ही स्वर्ग के दृश्य उन्होंने छत पर दिखाये हैं।

अचलगढ़

माऊंट आबू से 10 किलोमीटर दूर एक छोटा-सा गाँव है। वहाँ अचलेश्वर महादेव शिव का मन्दिर है जो बहुत ही विशिष्ट है। इस मन्दिर में शिवलिंग नहीं है परन्तु लिंग के स्थान पर एक सुराख है जिसमें एक बहुरंगी पत्थर है जिसको शिव जी का पदकमल माना जाता है। अन्य शिव के मन्दिरों की तरह इस मन्दिर में भी नंदी है। अचलेश्वर शिव बाबा अपने बच्चों को हर परिस्थिति में अचल और स्थिर रहने की शिक्षा देते हैं। जो हर परिस्थिति में अचल रहता है वही विजयी आत्मा है। इसके साथ-साथ जैनियों का भी बहुत सुन्दर मन्दिर बना हुआ है।

गौमुख

माऊंट आबू के निकट एक चोटी से करीब 740 सीढ़ियां उतरने के बाद गुरु वशिष्ठ का एक आश्रम है। वहाँ पर एक गौमुख है। गौमुख से पानी की धारा बहती रहती है। लोग उस जल को गंगाजल मानते हैं। मान्यता है कि उस जल को पीने से सारे पाप धुल जाते हैं। गौमुख ब्रह्माबाबा का प्रतीक है। शिव बाबा, ब्रह्माबाबा के रथ द्वारा ज्ञान और योग सिखा रहे हैं। शिव बाबा का दिया हुआ ज्ञान जो ब्रह्माबाबा के मुख कमल से निकल रहा है, वह ज्ञान-गंगा सबका पाप धो देती है और जो आत्मा इस ज्ञान-गंगा का सेवन करती है वह पवित्र बन जाती है।

अधर देवी

पाण्डव भवन के समीप, देलवाड़ा मन्दिर की तरफ जाते समय एक स्थान आता है, जहाँ 365 सीढ़ियां चढ़ने के पश्चात् अर्बुदा देवी का एक मन्दिर है जिसमें अर्बुदा माँ के नाम से एक मूर्ति है जिसकी गोद में एक बच्चा है। इसी को अधरकुमारी के रूप में पूजा जाता है। बाबा इस मन्दिर का दृष्टान्त देते हुए बताते हैं कि बच्चे, प्रवृत्ति मार्ग पर चलते हुए कुमार-कुमारी की तरह तुम्हें पवित्र जीवन में रहना है। प्रवृत्ति में रहते हुए जो पवित्र बने हैं उनकी पूजा भक्ति में अधर कुमार-कुमारी के रूप में होती है।

सोमनाथ मंदिर

गुजरात में, सौराष्ट्र के प्रभास क्षेत्र में सोमनाथ का मन्दिर है। बताते हैं कि यह राजा विक्रमादित्य ने बनवाया था जिसमें पहले-पहले हीरे का लिंग था और जिसकी राजा स्वयं पूजा करता था। इसका इतिहास बताते हुए बाबा हम बच्चों को कहते हैं कि जो प्रथम पूज्य श्रीनारायण की आत्मा है वही जब द्वापरयुग के प्रारम्भ में पहले-पहले पुजारी बनती है तब विक्रमादित्य के रूप में शिव बाबा का सुन्दर मन्दिर सोमनाथ के नाम से बनाती है। यह मन्दिर बारह ज्योतिर्लिंगों में से एक है। यह बहुत ही प्राचीन मन्दिर है। इसका उल्लेख ऋग्वेद में भी है। इस मन्दिर को नित्य पवित्र स्थान भी कहा जाता है। मोहम्मद गजनवी के द्वारा अनेकों बार इस पर आक्रमण किए गए और यहाँ से अथाह सम्पत्ति को लूटकर वह ले गया। शिव बाबा अक्सर मुरलियों में कहते हैं कि द्वापरयुग के मन्दिरों में इतना धन और अमूल्य सम्पदा थी तो सतयुग में कितनी सुसम्पन्नता और समृद्धि होगी!

दक्ष प्रजापति

कहा जाता है कि ब्रह्मा की अंगुली से दक्ष प्रजापति का जन्म हुआ और कहते हैं कि सारी मानव जाति उन्हीं की सन्तान है। यह भी मान्यता है कि प्रयाग क्षेत्र में विश्व कल्याण के लिए उन्होंने ब्रह्म-यज्ञ रचा। वास्तव में किसी मनुष्य द्वारा रचे हुए यज्ञ से विश्व का कल्याण नहीं हो सकता बल्कि विश्व का कल्याण सिर्फ शिव बाबा द्वारा रचे गये रुद्र-ज्ञान-यज्ञ से ही होता है। प्रजापिता भी, जो आदि देव हैं और शिव बाबा के रथ हैं, उन्हीं को कहा जा सकता है।

द्रौपदी

पाण्डवों की पत्नी द्रौपदी, हस्तिनापुर की भरी सभा में ऐसी परिस्थिति में पड़ गई जहाँ उनकी इज्जत ही दांव पर लग गई। इसका वर्णन एक अद्भुत आध्यात्मिक रहस्य को स्पष्ट करने के लिए ही किया गया है। शिव बाबा कहते हैं कि यह घटना समर्पण-भाव को सूचित करती है। कलियुग में भोली-भाली माताओं पर बहुत अत्याचार होते हैं। उन्हीं का प्रतीक है द्रौपदी। जब द्रौपदी अपने आपको भूलकर, अपनी शक्ति को भूलकर, सभा के सभी लोगों को भूलकर भगवान की शरण में गयी तब भगवान ने उसकी रक्षा की अर्थात् जब हम भी सम्पूर्ण रीति से परमात्मा के आगे समर्पित होते हैं तब हम बच्चों की रक्षा वे स्वयं करते हैं। यह कथा है समर्पणभाव और संपूर्ण निश्चय की।

विराटरूप

दक्ष प्रजापति के पौत्र विवास्वान के दो पुत्र थे। मनु, मानव वंश के जनक और यमराज, मृत्यु के देवता। कहा जाता है कि इस पृथ्वी की मानव जाति मनु के पुत्रों से उत्पन्न हुई है। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र उन्हीं से पैदा हुए हैं। ब्राह्मणों की रचना मनु के माथे से, क्षत्रियों की उसके कंधों से, वैश्यों की उसकी जांघों से और शूद्रों की उसके पैरों से हुयी। उनके जन्म स्थानों के अनुसार उनके कार्य निश्चित किये गये, जैसे ब्राह्मणों को वेद-पाठ, क्षत्रियों को राजशाही, वैश्यों को व्यापार और शूद्रों को सेवा का। लेकिन इस मनगढ़ंत कहानी पर पुन: सोचने की आवश्यकता है। यदि यह सच है कि विविध वर्णों की रचना भगवान ने ही की है तो जो धार्मिक झगड़े, भेदभाव, मतभेद और विषमतायें आज हम देख रहे हैं, इन सब का जवाबदेह भी भगवान को ही होना चाहिए। परन्तु यह एक अच्छी तरह से जाना हुआ सत्य है कि ईश्वर ऐसा कोई भेदभाव नहीं रखता और उसके लिए सभी मनुष्य समान हैं। यदि कहीं कुछ फर्क है तो वह मनुष्य के गुणों में है। यदि नीच जाति में जन्मा एक व्यक्ति अच्छी आदत और आध्यात्मिक सोच में उच्च है तो वह सच्चा ब्राह्मण कहलाने के योग्य है। इसी तरह यदि राजघराने का व्यक्ति चरित्र से नीच है तो वही वास्तविक शूद्र है। इन चार वर्णों के साथ एक और वर्ण है देवताओं का। शिव बाबा अपने बच्चों को शूद्र से ब्राह्मण और फिर ब्राह्मण से देवता में परिवर्तित कर रहे हैं।

भीष्म पितामह

भीष्म, महाभारत के महापर्व के एक ऐसे महान व्यक्तित्व हैं जिन्होंने अपने पिता शान्तनु की खुशी के खातिर राजगद्दी न लेने और शादी न करने का व्रत लिया था। जब से उन्होंने प्रतिज्ञा ली तब से उनका मन एक बार भी राजगद्दी या शादी या अन्य इच्छाओं पर प्रलोभित नहीं हुआ। शिव बाबा अपने बच्चों को भीष्म पितामह जैसा रहने की प्रेरणा देते हैं। एक बार प्रतिज्ञा करने के बाद संकल्प में भी छोड़े हुए विकारों पर प्रलोभित नहीं होना चाहिए। यही है सच्ची प्रतिज्ञा को निभाने का तरीका। नियन्त्रण करने की शक्ति में और ज्ञानी बनने के विषय में बाबा भीष्म पितामह का उदाहरण देते हैं।

पाम्पिया का खेल

पाम्पिया रोम देश के एक शहर का नाम है। पाम्पिया एक बहुत सुन्दर शहर था लेकिन वेसूवियस नामक दावानल के कारण शहर पूरा नष्ट हो गया। माया का पाम्प ऐसा है जो ऊपर से बहुत आकर्षित करता है लेकिन अन्दर खोखला होता है। इन आँखों से जो कुछ भी देखते हैं वह सब विनाश होने वाला है। विनाशी चीज़ों के ऊपर मोह रखने से दु:ख ही मिलता है। अपने को अविनाशी आत्मा समझकर निराकारी शिव बाबा को प्यार से याद करना ही माया के पाम्प अथवा आकर्षणों से मुक्त होना है।

गणेश और कार्तिक

पुराण की यह प्रसिद्ध कहानी, शिव और उनकी दो सन्तानों की है। गणेश जी को स्कंद भी कहते हैं और कार्तिकेय को कुमार भी कहते हैं। बुद्धि और विवेक के देवता गणेश को विघ्न-विनाशक कहते हैं। उनके परामर्श से ही हर कार्य का शुभारम्भ किया जाता है। गणेश अच्छे लेखक और शास्त्रों के ज्ञाता माने जाते हैं। उन्होंने व्यास मुनि के द्वारा उच्चारण करने पर महाभारत को लिखा था। ऐसी मान्यता है कि गणेश की दो पत्नियाँ थी – एक सिद्धि अर्थात् 'प्राप्ति' और दूसरी विधि अर्थात् 'सही तरीका'। इनको उन्होंने अपनी बेहद की दूरदर्शिता से जीता था।

शिव के दूसरे पुत्र कार्तिकेय को, मोर पर सवारी करते और हाथ में तीर और धनुष लिए हुए दिखाते हैं। इन्हें हिन्दू लोग युद्ध का देवता मानते हैं। दक्षिण भारत में इन्हें सुब्रह्मण्यम् कहा जाता है।

बताते हैं कि गणेश और कार्तिकेय के बीच एक बार प्रतिस्पर्धा हुई। शर्त यह थी कि जो भी विश्व परिक्रमा की दौड़ में जीतेगा वही इन दोनों सुन्दर नारियों से विवाह कर सकेगा। सिद्धि और विधि को किसी संस्करण में यह भी कहा गया है कि वे नारी के बजाए आम थे। कार्तिकेय निकल पड़े लम्बी यात्रा पर और थके-मांदे घर वापस आये। वहाँ उन्होंने देखा कि उनके भाई गणेश ने दोनों कन्याओं से विवाह कर लिया है। गणेश ने इससे पूर्व ही पूरी श्रद्धा के साथ अपने पिता शिव के चक्कर लगा लिये थे, यह मानकर कि शिव ही तीनों लोकों के भगवान हैं, त्रिलोकीनाथ का श्रद्धापूर्ण चक्र लगाना विश्व का चक्कर लगाने के बराबर है। गणेश ने हलचल और हड़बड़ी वाली विधि को न अपनाकर सही विधि से सिद्धि प्राप्त की इसलिए उनकी ही विजय हुई।

हिरण्यकश्यप और प्रह्लाद

बहुत से मनुष्य विश्वास करते हैं कि लम्बे समय तक साधना की जाए तो कोई भी दुनियावी प्राप्ति की जा सकती है। परन्तु यदि साधना को सिर्फ दुनियावी चीज़ों की प्राप्ति या किसी स्वार्थ की खातिर इस्तेमाल करें तो अन्तिम परिणाम बहुत बुरा होता है। भारत में खास होली के त्योहार पर हिरण्यकश्यप और प्रह्लाद की कहानी सुनाई जाती है। होली एक रंगों का त्योहार है। इस मांगलिक पर्व पर सभी मित्र-सम्बन्धी आकर एकजुट होते हैं और होलिका जलाकर इसका समापन करते हैं। यह कहानी पौराणिक कथा पर आधारित है जिसमें विष्णु अवतार लेते हैं 'नरसिंह' रूप में अर्थात् अर्ध मनुष्य और अर्ध पशु के रूप में।

बहुत समय की बात है – दैत्यराज हिरण्यकश्यप, बुढ़ापे से, बीमारियों से और दुश्मनों से सदा के लिए बचा रहना चाहता था। वह अमर बन पूरे विश्व पर राज्य भी करना चाहता था। राक्षस होते हुए भी वह शिव-भक्त था। उसकी तपस्या से प्रसन्न होकर ब्रह्मा जी वरदान देने के लिए तैयार हो गये और कहा कि जो चाहो सो मांग लो। हिरण्यकश्यप ने वरदान मांगा कि मुझे न कोई मनुष्य, न पशु, न भगवान मार सके। न मैं अन्दर, न बाहर मरूँ, न रात में, न दिन में, न आकाश में, न जमीन पर, न किसी अस्त्र से, न शस्त्र से मरूं।

ब्रह्मा जी ने प्रसन्न होकर वरदान दे दिया। वरदान प्राप्त होने के बाद वह स्वयं को सुरक्षित महसूस करने लगा और उसने अपनी कुरूपता दिखानी शुरू की। उसने सभी देवताओं की पूजा पर रोक लगा दी और अपनी पूजा कराने के लिए सबको बाध्य करने लगा।

प्रह्लाद, हिरण्यकश्यप का छोटा पुत्र था जो भगवान विष्णु का बहुत बड़ा भक्त था। जब हिरण्यकश्यप ने यह मांग रखी कि उनकी ही पूजा की जाए तो

प्रह्लाद ने ऐसा करने से मना कर दिया और कहा कि ''भगवान सिर्फ एक है।'' इस पर हिरण्यकश्यप ने उसे बहुत समझाने की कोशिश की और न मानने पर उस पर अत्याचार भी करने प्रारम्भ कर दिए परन्तु प्रह्लाद अटल रह अपने इष्ट देवता की ही पूजा क ता रहा। क्रोध में आकर हिरण्यकश्यप ने जहरीले सर्पों के बीच उसे डलवा दिया परन्तु प्रह्लाद जीवित बच गया। प्रह्लाद को मारने के लिए बड़े हाथी भी भेजे गये पर यह सब भी व्यर्थ रहा।

प्रह्लाद के मारने के कई असफल प्रयासों के बाद हिरण्यकश्यप ने अन्त में अपनी बहन होलिका के साथ मिलकर उसे मारने की एक योजना बनाई। उसकी शिवभक्त बहन को यह वरदान मिला था कि वो जब विशेष वस्त्रों को धारण कर अग्नि में प्रवेश करेगी तो अग्नि भी उसे जला नहीं सकेगी। होलिका प्रह्लाद को गोद में लेकर बैठ गई। तुरन्त ही वह वस्त्र होलिका की देह से निकलकर प्रह्लाद के चारों ओर लिपट गया। होलिका अग्नि में जल गई पर प्रह्लाद बच गया।

क्रोध में आकर हिरण्यकश्यप अपने पुत्र की ओर मुड़ा और कहा कि ठीक है, यदि तुम्हारा भगवान है तो मुझे दिखाओ। क्या, इस खम्भे में है? मैं उसे मार डालूँगा। ऐसा कहकर जैसे ही हिरण्यकश्यप ने खम्भे पर तलवार मारा, उसी वक्त विष्णु भगवान खम्भे से नरसिंह अवतार के रूप में बाहर निकल आए, अर्ध नर, अर्ध पशु रूप में। इस वक्त शाम हो चुकी थी। यह समय था संगम का – न दिन न रात। नरसिंह ने हिरण्यकश्यप को अपनी गोद में लिया और उसके पेट को नाखूनों से फाड़ दिया। ब्रह्मा का वरदान टूटे बिना ही हिरण्यकश्यप का अन्त हुआ।

आध्यात्मिक भाव – इस कहानी का यह अर्थ है कि विकार रूपी (काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार, ईर्ष्या) सभी दानव, कल्याणकारी संगमयुग में विनाश को पाते हैं। यह न तो कलियुग का समय है, न सतयुग का। होली पर

एक धागे में रोटी के टुकड़ों को बांधकर आग में डाला जाता है। रोटी पक जाती है परन्तु धागा सुरक्षित रहता है। यह उस घटना की याद दिलाती है जब पुरानी दुनिया विनाश को प्राप्त करती है और प्रह्लाद अर्थात् अविनाशी आत्मा बच जाती है।

होली में होलिका बनाकर उसमें सारी पुरानी चीज़ों को जला देते हैं। यह निशानी है कि सत्य की सदा असत्य पर विजय होती है। नरसिंह प्रतीक है परमात्मा शिव का जो इस पुरानी दुनिया में आकर विकारों को दूर करते हैं। प्रह्लाद प्रतीक है शिव-पुत्र आत्मा का जो सगे-सम्बन्धियों द्वारा गलत कर्म करने को मजबूर किए जाने पर भी उनसे अप्रभावित रहा और अन्त तक विकारों को स्वीकार नहीं किया।

कंस और पूतना

श्रीकृष्ण के जन्म के समय, दानवराज कंस, मथुरा के नरेश थे। कंस ने स्वप्न में देखा कि उसकी बहन देवकी और बहनोई वसुदेव की 8 वीं सन्तान उसकी मृत्यु का कारण बनेगी। इसलिए डरकर उसने राज्य में सभी नवजात शिशुओं को मार डालने का आदेश दे दिया। जब-जब देवकी और वासुदेव के बच्चे जन्म लेते कंस उन्हें मार डालता। इस तरह देवकी ने अपने 7 बच्चे खो दिए।

एक रात देवकी ने स्वप्न में विष्णु का साक्षात्कार किया और उन्होंने कहा कि वह उनके गर्भ से कृष्ण रूप में जन्म लेंगे तथा जो कंस-वध करेंगे (कृष्ण विष्णु के अवतार माने जाते हैं)। जब मध्य रात्रि में देवकी ने अपने आठवें बच्चे को जन्म दिया तो अमावस्या की उस काली रात में, घोर वर्षा में वसुदेव जी उस बच्चे को चुपके से जेल से निकाल दूसरे राज्य में पहुँच गये। जब वह बच्चे को लिए जा रहे थे तो नाग देवता उठ खड़े हुए और उन्होंने भीषण वर्षा से बच्चे की रक्षा की। जब वे नदी के पास पहुँचे तो कृष्ण के पैर पड़ते ही यमुना देवी ऊपर उठकर आई और प्रणाम किया। फिर नदी का पानी स्वत: ही हट गया और उनके जाने का मार्ग बन गया।

वसुदेव जी, गोप गाँव के निवासी नन्द जी के घर पहुँचे। नन्द की पत्नी यशोदा ने उसी समय एक बच्ची को जन्म दिया था (वह देवी थी)। वसुदेव ने बच्चों को बदल लिया। बच्ची को गोद में लिए वसुदेव मथुरा वापस आ गए। उनकी अनुपस्थिति की किसी को खबर तक नहीं हुई। अगले दिन जैसे ही कंस को खबर मिली कि देवकी को बच्चा हुआ है तो वह उसे मारने पहुँच गया। उसने बच्ची को उठा लिया और जमीन पर पटकने ही वाला था कि वह हवा में उड़ गई और बोली ''तुम्हें मारने वाला तो जीवित'' है।

जब कंस को पता चला कि कृष्ण पास के राज्य में रहता है तो वह पुनः उसे मारने की कोशिशें करने लगा परन्तु असफल रहा। अन्त में कंस ने पूतना के साथ मिलकर एक योजना बनाई। वह एक सुन्दर नारी का रूप धारण कर कृष्ण के गांव पहुँची और यशोदा से आग्रह किया कि ''क्या वह कृष्ण को दूध पिला सकती है?'' दूध में वह जहर पिलाना चाहती थी। पूतना ने कृष्ण को अपनी गोद में उठा लिया। कृष्ण उसे पहचान चुके थे कि वह दानवी है और उन्होंने उसको मार डाला। आगे जाकर कंस ने कृष्ण के साथ युद्ध करने की घोषणा की। यशोदा कृष्ण को चुनौती का सामना नहीं करने देना चाहती थीं पर नन्द को पता था कि वह भगवान हैं इसलिए उन्होंने उसे कंस के राज्य में भेजा। कंस ने सभी शक्तियाँ इस्तेमाल कर कृष्ण को मारने की कोशिशें की परन्तु कृष्ण को मार नहीं पाया और खुद ही मारा गया।

आध्यात्मिक भाव – इस कहानी का सार यह है कि अच्छाई की सदा ही बुराई पर विजय होती है। पहले-पहले बुरे लोग कुछ भी करें पर बाद में उनका अन्त जरूर होता है और जो अच्छे होते हैं वे सत्यता के मार्ग पर चलकर विजयी होते हैं। हम कह सकते हैं कि कर्म के नियम अनुसार जो जैसा बोयेगा वैसा ही काटेगा। बुरा बोयेगा तो बुरा ही काटेगा।

कुम्भकरण

रावण के भाई कुम्भकरण का रामायण में जिक्र किया गया है। वह 6 महीने सोता और 6 महीने जागता था। कहा जाता है कि जब वह सांस लेता था तो पृथ्वी पर तूफान आ जाता था। जब राम जी ने लंका पर आक्रमण किया तो रावण ने अपने दूत भेजकर कुम्भकरण को जगाया। उसे निद्रा से जगाने में उसे घण्टों लग गये। उसने लंका की सेना में शामिल होकर सुग्रीव की सेना को हरा दिया परन्तु राम के साथ युद्ध में राम ने उसका सिर काटकर अलग कर दिया।

आध्यात्मिक भाव – कुम्भकरण नाम का अर्थ है कि जिसके कान कुम्भ या मटके की तरह हैं। मटके में की गई आवाज गूँजती तो है लेकिन समझ में नहीं आती। उसी तरह भगवान का ज्ञान जब कानों में पड़ता है तो जो लोग उसकी उपेक्षा करते हैं उनको कहा जाता है – कुम्भकरण।

मीरा

भारत के उत्तर-पश्चिम में स्थित राजस्थान के इतिहास से जुड़ी, मीरा की कहानी बहुत प्रचलित है। उनकी कहानी कृष्ण के साथ अटूट प्यार को दर्शाती है। मीरा, एक राजा की सबसे छोटी पुत्री थीं। उनकी सभी बहनों का विवाह हो चुका था। आठ वर्ष की उम्र में एक दिन जब वह बारात देखने गई तो उसने अपनी माँ से प्रश्न पूछा कि ''मेरा दूल्हा कौन होगा?'' माता ने उसे कृष्ण की एक मूर्ति दी और कहा, यह तुम्हारा दूल्हा है। माता को क्या पता था कि हंसीकुड़ी में कही गई बात के अनुसार मीरा कृष्ण को ही अपना पति मान लेगी। मीरा ने प्यार से उस मूर्ति को उठाया और अपने कमरे में चली गईं। उसके बाद वह दिन-रात कृष्ण की उपासना करने लगी।

कुछ समय बाद उनके माता-पिता ने उनका एक राज-घराने में विवाह कर दिया। श्रीकृष्ण से अटूट प्यार के विषय में उन्होंने अपने पति को बता दिया और कहा ''आप मेरे पति नहीं हो''। हो सकता है मेरे माता-पिता ने मेरे लिए आपका चयन किया है परन्तु मेरा तो कृष्ण संग पहले ही विवाह हो चुका है। उनके पति, उनकी असीम भक्ति को समझ उनसे प्यार करते रहे। वह विवाह के बाद भी महल में साधारण रूप में रहतीं और उन्हें चारों ओर कृष्ण ही कृष्ण दिखाई देते। वह श्रीकृष्ण की याद में कार्य करतीं, निरंतर भजन गाती रहतीं व नाचती रहतीं। उनके घर वाले जिन्हें परम्पराओं की परवाह थी, अपनी इच्छाओं की पूर्ति हेतु मीरा पर अत्याचार करने लगे। जब वे कामयाब नहीं हो सके तो उन्हें जहर का प्याला भेजा गया। मीरा जानती थीं कि यह प्याला जहर का है फिर भी पी लिया। कहानी में आगे यह है कि वह कृष्ण से इतना प्रेम करती थीं कि वह जहर का प्याला भी अमृत में बदल गया। एक दिन जब मीरा श्रीकृष्ण की स्मृति में घूम रही थी तो अचानक कृष्ण प्रकट हुए और उन्हें अपने साथ ले गये। आत्मा शरीर छोड़कर चली गई।

आध्यात्मिक भाव – हिन्दुओं की मान्यता है कि इस कहानी में दु:ख व प्राप्ति की खुशियाँ हैं। उदार राजा ने अपनी पत्नी मीरा की मृत्यु के बाद जीवनभर पश्चाताप किया। मीरा के गाये हुए भगवान के प्रति प्रेम के गीत आज भी भारत में सभी प्यार से सुनते हैं। उनका प्रेम सम्पूर्ण व दुनियावी चीज़ों से ऊपर था। वह भगवान पर बलि चढ़ गईं। भगवान से असीम प्रेम के कारण उन्हें कठिनाइयाँ भी आसान लगीं। पहाड़ जैसी परिस्थिति भी राई समान बन गई।

रुद्र ज्ञान यज्ञ

संस्कृत में 'रुद्र' शिव का दूसरा नाम है। भक्ति में रुद्र, पाँच मुख वाला एक दाना होता है जिसका अर्थ है कि रुद्र (शिव) ही आकर हमें सृष्टि के पाँचों युगों का ज्ञान (सतयुग, त्रेता, द्वापर, कलियुग, संगमयुग) देते हैं। हम ही देवता, सो क्षत्रिय, सो वैश्य, सो शूद्र, सो ब्राह्मण बनते हैं। हमें यह अनुभूति कराई जाती है कि हम कैसे रुद्रमाला का दाना बन सकते हैं।

भौतिक रूप में 'यज्ञ' का अर्थ है 'योग-अग्नि' परन्तु ब्रह्माकुमारीज़ में इसका अर्थ 'संस्था' है। हमारे कल्याणकारी बाबा ने इस रुद्र ज्ञान यज्ञ को रचा है, अपने प्यारे बच्चों के लिए। शिव बाबा ने अपना निमित्त माध्यम निश्चित कर उनका नाम 'ब्रह्माबाबा' रखा।

निराकार पिता परमात्मा शिव, यह ज्ञान हमें 'ब्रह्माबाबा' (अलौकिक पिता) के द्वारा देते हैं। आत्मायें इस ज्ञान को ग्रहण कर आत्म-ज्योति जगाकर रुद्र माला का दाना बनती हैं। हम स्वयं को परमात्मा पिता के आगे अर्पण करते हैं, उनके बच्चे बन उनके कार्य में निमित्त बनते हैं और बदले में आधा कल्प के लिए दिव्य दुनिया का अधिकार प्राप्त करते हैं।

सुखदेव और राजा जनक

प्रथम कथा –

बहुत समय की बात है, व्यास नाम के एक महान ऋषि इस भारत भूमि पर रहते थे जिन्होंने सर्व शास्त्र शिरोमणी भगवत् गीता की रचना की। अपनी दिव्य-शक्ति से उन्होंने अपनी पत्नी के गर्भ में एक संत आत्मा को धारण करवाया। जैसे-जैसे बालक गर्भ में बड़ा होता गया व्यास देव ने शास्त्रों के गुह्य रहस्यों की जानकारी माता के द्वारा प्रदान करना प्रारम्भ किया। बालक ने जब जन्म लिया तो नाम रखा गया 'सुखदेव'। पिता के द्वारा दी गई दिव्य शिक्षाओं के कारण वह बालक अद्भुत बना। 12 वर्ष की छोटी-सी उम्र में ही वह सभी शास्त्रों के श्लोकों का ज्ञाता भी बन गया। भारतीय रिवाज़ों के अनुसार प्रत्येक मनुष्य को अपने जीवनकाल में गुरु अवश्य बनाना चाहिए।

जब सुखदेव जी गुरु की खोज में चले तो पिता ने उन्हें राय दी कि वह राजा जनक के पास जाए जोकि उसी राज्य के राजा थे। सुखदेव ने जब राजमहल में प्रवेश किया तो देखा कि राजा जनक रत्नजड़ित सोने के सिंहासन पर विराजमान हैं और अपने मंत्रियों और पंखा करने वाली दासियों से घिरे हुए हैं। यह दृश्य सुखदेव को अच्छा नहीं लगा। कुंठित हो, पीछे मुड़कर तेज कदमों से वह राजमहल से बाहर जाने लगे। मन ही मन बड़बड़ाने लगे ''पिताश्री को शर्म आनी चाहिए थी कि उन्होंने मुझे भौतिक चीज़ों से आकर्षित और भोग-विलास में लिप्त एक व्यक्ति के पास भेजा।'' सुखदेव ने विचार किया कि ऐसा दुनियावी मनुष्य कैसे मेरा शिक्षक बन सकता है।

राजा जनक, राजा होते भी साधु थे। वे इस दुनिया में रहते हुए भी दुनियावी बातों से परे थे। अध्यात्म के उच्चतम् शिखर पर होने के कारण राजा जनक सुखदेव के संकल्पों को जान गये और उनके पास यह आज्ञा देकर एक

दूत भेजा कि उन्हें सत्कार के साथ वापस ले आओ और इस तरह शिक्षक और शिष्य का मिलन हुआ। राजा ने अपने सहचरों को आदेश दिया कि वे वहाँ से चले जायें। इसके बाद दोनों ईश्वर चर्चा करने लगे तो उसमें ही लीन हो गये। चार घण्टे बीत गए, सुखदेव भूख और प्यास से व्याकुल होने लगे परन्तु राजा परमात्मा की याद में लीन थे। सुखदेव ने बाधा डालना उचित नहीं समझा।

कुछ घण्टे और व्यतीत हो गए, इतने में दो दूत भागे-भागे आये और कहने लगे महाराज, पूरे शहर में आग लग गई है और यह आग बेकाबू हो महल की ओर आ रही है, क्या आप देखने नहीं आयेंगे और जानना नहीं चाहेंगे कि कैसे आग लगी? राजा ने उत्तर दिया, ''मैं अभी सुखदेव के संग परमात्म चिंतन में व्यस्त हूँ। मेरे पास किसी और चीज़ के लिये समय नहीं है।''

एक घण्टे के उपरान्त वे ही दूत पुन: भागे-भागे राजा जनक के पास आये, उन्हें घेर लिया और कहने लगे – ''महाराज, कृपया भागिए, महल में आग लग चुकी है और यह दरबार की ओर बढ़ रही है।'' राजा ने उत्तर दिया – ''चिंता मत करो, मुझे परेशान न करो, मैं अपने मित्र के साथ ज्ञान-अमृत ग्रहण कर रहा हूँ।''

सुखदेव राजा की इस प्रकार की वृत्ति देख अचम्भे में पड़ गये परन्तु उस आश्चर्य से वे अप्रभावित रहना चाहते थे। थोड़ी ही देर बाद आग में झुलसे हुए दो दूत आये और राजा जनक के सामने चिल्लाने लगे, ''महाराज, महाराज, यह आग आपके सिंहासन की ओर बढ़ रही है। भागिये, नहीं तो आप दोनों भी जल जायेंगे''। राजा ने उत्तर दिया, ''आप दोनों स्वयं को बचाइए। मुझे परमात्मा की बांहों में सुरक्षा, शान्ति और आनन्द मिल रहा है। मुझे इस विनाशकारी अग्नि से डर नहीं लगता।''

दोनों दूत वहाँ से भाग गये। वह आग सुखदेव के शाखों की गठरी तक

पहुँच गई परन्तु राजा जनक फिर भी अचल-अडोल स्थिति में बैठे रहे।

सुखदेव अब शास्त्रों को जलता देख चौकन्ने हो गये और खड़े होकर आग बुझाने में लग गये ताकि उनकी अनमोल पुस्तकें बच जायें। राजा जनक ने हंसकर हल्का-सा हाथ मारा और आग बुझ गई। सुखदेव आश्चर्यवत् देखते ही रह गये और बाद में अपने स्थान पर पुन: बैठ गये। तब राजा ने शान्त भाव से कहा – ''हे युवक सुखदेव, तुमने मुझे दुनियावी चीज़ों में मोहित पतित राजा समझा परन्तु स्वयं को देखो। तुम सबकी रक्षा करने वाले भगवान की याद को छोड़कर अपनी पुस्तकों की रक्षा करने लग पड़े। मैंने राज महल के जल जाने की ओर भी ध्यान नहीं दिया। भगवान का हर कार्य चमत्कार से भरा हुआ रहता है, मैं आपको यही दिखाना चाहता था। वैसे तुमने घरबार छोड़कर वैराग्य धारण कर लिया फिर भी तुम परमात्मा से ज्यादा इन किताबों के संग जुड़े हुए हो''।

आध्यात्मिक भाव – कहानी का आध्यात्मिक सार यही है कि 'वैराग्य' एक मानसिक स्थिति है जो घर-परिवार में रहते हुए, देहभान को छोड़ देने से, निमित्त भाव धारण करने से प्राप्त हो सकती है।

द्वितीय कथा –

एक दिन राजा जनक ने अपने शिष्य सुखदेव को दो प्याले के आकार के दीपकों में तेल भरकर दिया और कहा कि पूरे महल की सभी चीज़ों को विस्तार से देखना और आकर के वर्णन करना लेकिन दीपकों से तेल की एक बूंद भी छलकनी नहीं चाहिए। यदि एक बूँद भी तेल छलक गया तो तुम्हें विद्या नहीं दूँगा।

राजा ने दो दूतों को सुखदेव के साथ भेजा और दीपों को बार-बार भरते रहने का आदेश भी दिया। यह एक चुनौती भरा कार्य था। दो घण्टे के बाद

सुखदेव जी, जीत की खुशी में बिना एक बूँद तेल छलकाए राजा के पास पहुँचे। राजा जनक ने पूछा – सुखदेव! बताओ तुमने मेरे महल के अन्दर क्या-क्या देखा? सुखदेव ने कहा, हे गुरुदेव, मेरी एक ही उपलब्धि रही कि बिना एक बूँद तेल गिराए मैं वापस पहुँच गया। मेरा मन इसी लक्ष्य पर एकाग्र था कि एक बूँद भी तेल न छलके। बाकी महल में क्या-क्या है इस बात पर मैंने ध्यान ही नहीं दिया। राजा जनक ने कहा, मुझे तुमसे बहुत निराशा हुई। तुमने पूरी परीक्षा पास नहीं की। पुन: दीप लेकर जाओ। ध्यान रहे बिना तेल छलकाए सभी चीज़ों को ध्यानपूर्वक देखना।

दस घण्टे बाद सुखदेव शान्तचित्त स्थिति से वापस आये। उन्होंने एक बूँद भी तेल गिरने न दिया और न ही वे पहले की तरह उत्तेजित थे। राजा के सभी प्रश्नों का सही-सही जवाब भी दिया। उन बारीकियों का भी व्याख्यान किया जो राजमहल में थीं। तब राजा जनक ने यह रहस्य बतलाया कि ठीक इसी प्रकार मैं भी रहता हूँ। मैं महल में अवश्य रहता हूँ परन्तु इससे मोहित नहीं हूँ। मैं सदा आत्मा-ज्योति को ही देखता हूँ।

आध्यात्मिक भाव – आत्मिक स्थिति के निरन्तर प्रयास से हम डिटैच (न्यारे) हो जायेंगे। साथ ही साथ अपने कर्तव्य को भी सजग रह पूरी जिम्मेवारी के साथ निभा सकेंगे।

शिव पार्वती का विवाह

यह कहानी है शिव और पार्वती की। पार्वती 'सती' के नाम से जानी जाती हैं। मान्यता यह है कि 'सती', देवताओं के प्रमुख प्रजापति की छोटी पुत्री थीं। पिता के न चाहते हुए भी वह शिव से ही विवाह करना चाहती थीं। राजा दक्ष ने अपनी पुत्री के विवाह के लिए एक भव्य आयोजन किया जिसमें राजकुमारी को, आमंत्रित राजकुमारों में से अपना वर चुनना था। राजा ने शिव को छोड़ सभी देवताओं और चारों दिशाओं से राजकुमारों को निमंत्रण दिया था।

'सती' जब हाथों में वरमाला लिये हुए सभा में आयी तो वहाँ शिव को न देख बहुत दु:खी हुईं और माला को हवा में फेंक शिव को पुकारा और आग्रह किया कि वह उस माला को स्वीकार करें। शिव जी ने उनकी पुकार सुन जयमाला को स्वीकार कर लिया। हारकर राजा ने अपनी पुत्री का विवाह उनके संग कर दिया। शिव, पार्वती को लेकर कैलाश पर्वत पर गये जहाँ उनका महल था।

कुछ समय उपरांत राजा दक्ष प्रजापति ने अश्वमेध यज्ञ रचाया। (जिस यज्ञ में घोड़ों की बली चढ़ाई जाती है)। बहुत से देवताओं को निमंत्रण दिया परन्तु शिव जी को नहीं दिया। सती सभी देवताओं को उस ओर जाते देख अपने पिता से मिलने गईं और उनसे विनती करने लगी कि उनके पति को भी निमंत्रण दिया जाए। दक्ष ने पार्वती की बातों पर ध्यान नहीं दिया। सती उसी यज्ञ-अग्नि में कूद गई और अपने को स्वाहा कर दिया।

उसके बाद 'सती' ने पर्वतराज 'हिमवन' के यहाँ पार्वती के रूप में पुन: जन्म लिया और बाद में शिव जी से विवाह भी किया। इसीलिए उन्हें हिमावती, पार्वती, देवी उमा अर्थात् 'हिमालय की देवी' के नाम से भी जाना जाता है। बताते हैं कि पार्वती जी बाल्यकाल से ही घोर तपस्या करने लगीं जिससे कि वह

शिव जी को पुन: पति के रूप में प्राप्त कर सकें। अन्त में शिव जी उनकी तपस्या से प्रसन्न हुए और उनकी इच्छा मान ली। प्रजापिता ब्रह्मा ने इस विवाह समारोह का आयोजन किया।

विवाह में सभी प्रकार के लोगों को निमंत्रण दिया गया। देवतागण भी आये तो दानव भी आये, अन्धे, बहरे, लूले, लंगड़े, कुब्जायें आदि सारे संसार के लोग इस विवाह समारोह में एकत्रित हुए।

आध्यात्मिक भाव – आत्मा और परमात्मा के मिलन में सभी को भाग लेने का मौका दिया जाता है। बाबा ने मुरली में कई बार जिक्र किया है कि तुम ही पार्वतियाँ हो। कठोर तपस्या करके जब तुम कर्मातीत अवस्था को प्राप्त कर, सम्पूर्ण बन जाती हो तब शिव साजन अपने साथ आप सभी आत्मा रूपी पार्वतियों को परमधाम, आत्माओं की दुनिया में ले जाते हैं। सभी नम्बरवार पुरुषार्थ अनुसार बाराती बन भगवान के साथ घर वापस जाते हैं। जो पढ़ाई के आधार से पास विद ऑनर बनते हैं वह उनके समीप रहेंगे, जो पास होते हैं वे पीछे और जो फेल हो जाते हैं वे बारात में सबसे पीछे आते हैं।